3. हिन्दी पत्रकारिता : विविध आयाम

3.1 हिन्दी पत्रकारिता : परिचय एवं स्वरूप (1851-1900)

भारतीय इतिहास में उत्तर उन्नीसवीं शताब्दी राष्ट्रीय-नवजागरण एवं सुसंगठित जनमत के अंकुरण का काल था। सम्पूर्ण देश पश्चिमीकरण, वैज्ञानिक संचार-साधनों एवं सांस्कृतिक-राजनीतिक परिवर्तनों से स्पंदित था। इसी परिवेश में राष्ट्रीय नवचेतना के साथ राष्ट्रीय पत्रकारिता का प्रस्फुटन हुआ। प्रारंभिक हिन्दी पत्रकारिता भी भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के उदय के साथ नव-आकार, नव-भंगिमा तथा नव-राष्ट्रीय स्वरूप ग्रहण करने लगी थी। यद्यपि तत्कालीन हिन्दी पत्रकारिता में आधुनिक पत्रिकाओं के समान भव्य साज-सज्जा, नयनाभिराम चित्रांकन, इन्द्रधनुषी विज्ञापनों की भरमार, हजारों-लाखों में प्रसार-संख्या, व्यावसायिक अर्थ-निष्ठा एवं विषय-विशेषज्ञता आदि विशिष्टताओं के दर्शन ढूंढ़ने पर भी नहीं मिलते तथापि इसकी श्रेष्ठता सिद्ध होती है – इसकी प्रखर राजनीतिक चेतना, निरंतर संघर्ष-शीलता और प्रौढ़ क्रांतिकारी चिंतन में। इसकी उत्कृष्टता के प्रमाण मिलते हैं—इसके सशक्त संपादकीय तथा जातीय भाषा और जातीय (राष्ट्रीय) हित के लिए पूर्ण समर्पण एवं अपनत्व भाव में। इसके वैचारिक प्रभाव से ही आगामी पत्रकारिता के आदर्श मानदण्ड ढले, उसे सही दिशा मिली। तत्कालीन पत्रकारिता से हिन्दी गद्य को साहित्यिक गरिमा मिली तथा जन-भाषा हिन्दी में सहज वेग एवं कलात्मक सौंदर्य का विकास हुआ। इसी के अनवरत प्रयासों से जीवन के सभी क्षेत्रों में राष्ट्रीय नवचेतना, बौद्धिक-रचनात्मक चिंतन तथा सार्वदेशिक सबल जनमत का सूत्रपात हुआ। इसने अंग्रेजी औपनिवेशिक शासन के प्रति जनता में व्यापक मोहभंग की अनुभूति जागृत कर राष्ट्रीय आंदोलन की नींव डाली तथा राष्ट्र-चेतना को निरंतर अपनी सर्मपित आहूति के घृत से सुलगा कर स्वाधीनता-यज्ञ की ओर अग्रसर किया।

3.1.2 **द्विभाषी पत्रकारिता** : 1857 का महासमर हिन्दू-मुसलमान नेताओं तथा जनता के कंधे से कंधा भिड़ा कर लड़ा था। मौलाना अबुल कलाम आजाद के शब्दों में 'सभी भारतीय चाहे मुसलमान हों या हिंदू, हर बात को एक ही दृष्टिकोण से देखते थे और घटनाओं को एक ढंग से ही आंकते थे।···सदियों तक इकट्ठे रहने के परिणाम-स्वरूप हिन्दू-मुसलमानों के स्थायी मैत्री-संबंध हो गये थे।'[1] उस सद्भावपूर्ण परिवेश में

---

1. सुरेन्द्रनाथ सेन, अठारह सौ सत्तावन (भूमिका), पृ० 16

स्वाभाविक ही था कि हिन्दी-उर्दू पत्रकारिता भी संयुक्त रूप से निकलती। हिन्दी-उर्दू दोनों ही उस समय हिंदू-मुसलमान जनता की संपर्क-भाषाएँ थीं। दोनों भाषाओं में तब तक धर्म के आधार पर सांप्रदायिक विभाजन और अलग-अलग स्पष्ट पहचान नहीं बनी थी। हिन्दू-मुसलमान दोनों ही हिन्दी-उर्दू पत्रों का एक साथ संपादन तथा प्रकाशन करते थे। वे समझते थे कि हिन्दी-उर्दू में से किसी एक भाषा की उपेक्षा करके उनकी पत्र-पत्रिकाएँ जीवित नहीं रह सकती हैं। इसका कारण यह था कि उर्दू कचहरियों की सरकारी मान्यता प्राप्त (1837 ई०) भाषा बन चुकी थी और हिन्दी जनसाधारण की मातृभाषा थी ही। इन दोनों भाषाओं में भाषा-विज्ञान की दृष्टि से भी कोई अंतर नहीं है, केवल लिपि और शब्द-भण्डार पृथक् हैं। अतः इस काल में द्वि-भाषी पत्रों की लम्बी शृंखला चली—

प्रकाशन-तिथि	पत्र का नाम	संपादक-प्रकाशक	स्थान	भाषा-रूप
सन् 1850 ई०	मजहरूल सरूर	भरतपुर दरबार	भरतपुर	हिन्दी-उर्दू
1853	ग्वालियर गजट	मुंशी लछमनदास आदि	ग्वालियर	”
1854 ई०	समाचार सुधावर्षण	श्याम सुंदर सेन	कलकत्ता	हिन्दी-बंगला
1855	सर्वहितकारक	शिवनारायण	आगरा	हिन्दी-उर्दू
1856	राजपुताना अखबार	कन्हैया लाल	जयपुर	”
1857	पयामें आजादी	प्र० अजीमुल्ला खाँ, सं० बेदार बख्त	दिल्ली	
1865	खैर ख्वाहे हिंद	डा० आर० सी० माथुर	मिर्जापुर	”
1866	ज्ञान प्रदायिनी पत्रिका	प्र० बाबू नवीन चन्द्र राय सं० मुकुंद राम	लाहौर	
1867	रतन प्रकाश	पं० किशोरलाल नागर	रतलाम	”
”	विद्याविलास	वेंकटराम शास्त्री	जम्मू	”
1868	वृतांत-दर्पण	सदा सुख लाल	प्रयाग	”
1869	जगत् समाचार	—	आगरा	आगरा
”	मंगल समाचार	डा० गिरप्रसाद सिंह	मेरठ	”
”	जगदानंद	ठाकुर सिंह	—	
”	पापमोचन	कृष्ण चन्द्र	—	”

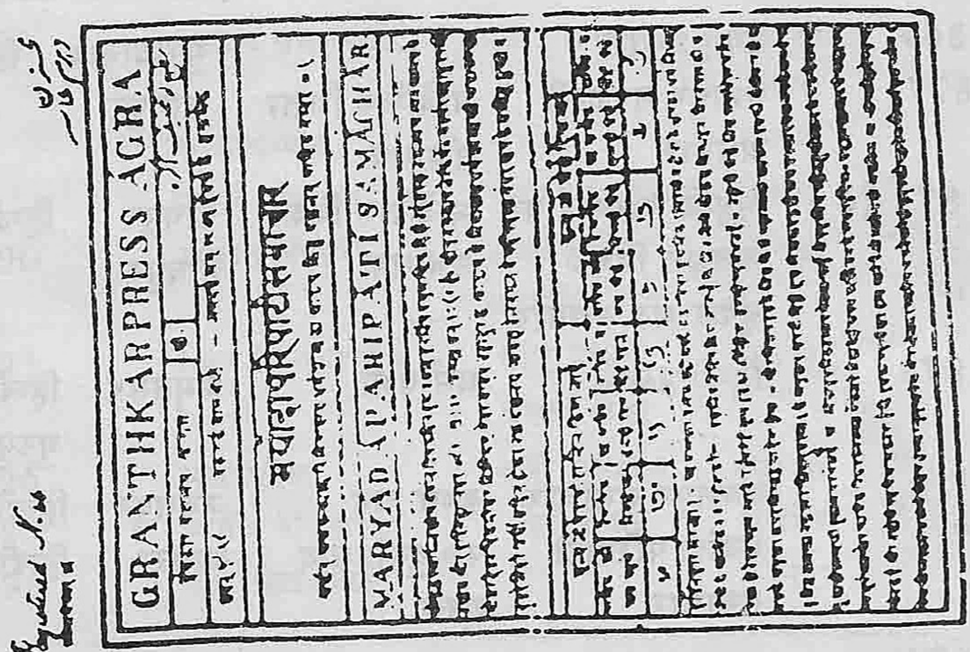
GRANTHKARPRESS AGRA

MARYADAPARIPATISAMACHAR

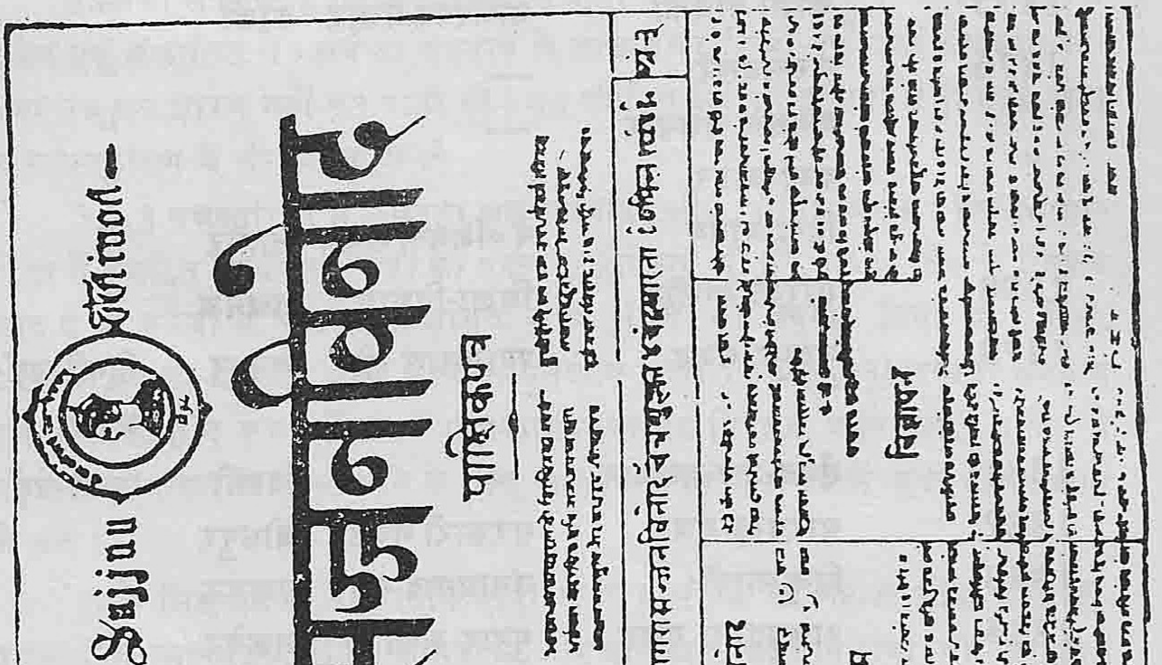
Sajjan Vinod

सज्जनविनोद

पाक्षिकपत्र

नियम

विज्ञापन

प्रकाशन-तिथि	पत्र का नाम	संपादक-प्रकाशक	स्थान	भाषा रूप
सन् 1869	जगत् प्रकाश	—	मुरादाबाद	हिन्दी-उर्दू
1877	नागपुर सरकारी अखबार	प्रादेशिक शिक्षा संचालक	नागपुर	”
1871 ई०	मुहब्बे मारवाड़ या मरूधर मित्र	प्रादेशिक शिक्षा-संचालक	नागपुर जोधपुर	हिन्दी-उर्दू
”	बुंदेल खंड अखबार	—		
1873	हिन्दी-प्रकाश	धर्म सभा	अमृतसर	हिन्दी-उर्दू-गुरमुखी
”	जबलपुर समाचार	कृष्ण राव	जबलपुर	हिन्दी-अंग्रेजी
”	मर्यादा परिपाटी समाचार	पं० दुर्गाप्रसाद शुक्ल	आगरा	हिन्दी-संस्कृत
1874	जगत आशना	—	पंजाब	हिन्दी-उर्दू
1875	काशी पत्रिका	बालेश्वर प्रसाद	काशी	”
1876	नूरूलबसर	—		”
”	कमरूल अखबार	—		”
”	कब्दे-जाइर			”
”	हिन्दू-बांधव	पं०शिवनारायण	लाहौर	”
1878	सरिश्ते तालीम	शिक्षा-विभाग	लखनऊ	”
1879	जयपुर गजट	श्यामलाल जी	जयपुर	हिन्दी-उर्दू-अंग्रेजी
1881	सैयद-उल-अखबार	—	दिल्ली	हिन्दी-उर्दू
1882	मारवाड़ गजट	सरकारी गजट	जोधपुर	”
1883	हिन्दुस्तानी	गंगाप्रसाद वर्मा	लखनऊ	”
1884	राजपुताना गजट	मुराद अली	अजमेर	”
”	मथुरा अखबार	दीनदयाल शर्मा	मथुरा	”
”	कुलश्रेष्ठ समाचार	—	”	”
	भारतभूषण	—	कानपुर	”
	जम्मू गजट	...	जम्मू	”
सन् 1889 ई०	परचा धर्म सभा	पं० गौरी शंकर वैद्य	फर्रुखाबाद	हिन्दी-उर्दू

प्रकाशन-तिथि	पत्र का नाम	संपादक-प्रकाशक	स्थान	भाषा-रूप
सन् 1890	ब्राह्मण समाचार	प्रतापनारायण	मुजफ्फर नगर	"
"	कायस्थ-पंच	--	प्रयाग	"
"	सद्धर्म प्रचारक	महात्मा मुंशीराम	दिल्ली	"
1890	शौकत जाफरी	सैयद हुसैन जाफरी	लखनऊ	"
1891	खिचड़ी समाचार	बाबू माधव प्रसाद खत्री	मिर्जापुर	"
1896	अलरफीक	वली मुहम्मद	बनारस	"
1897	भार्गव पत्रिका	गौरी शंकर	अजमेर	"
1898	गौड़ हितकारी	...	कानपुर	"

तालिका से स्पष्ट है कि हिन्दी-उर्दू द्विभाषी पत्र हिंदू-मुसलमान संपादकों द्वारा संपादित एवं संचालित थे। धर्म या संप्रदाय के आधार पर हिन्दी-उर्दू पत्रों की विभाजन-समस्या उग्र रूप धारण नहीं कर पायी थी। यह संगठित रूप पत्रकारिता में ही नहीं, सेना और सर्वसाधारण में भी व्याप्त था।[1]

3.1.3 **पत्रकारिता में उभरता अलगाववाद और भाषा-विवाद** : किन्तु पत्रकारिता में संगठित हिन्दी-उर्दू पत्रों की परम्परा होने पर भी सन् 1857 ई० के विप्लव के बाद से ही अंग्रेजों ने 'फूट डालो-शासन करो' नीति को बढ़ावा दिया था। सेना, आजीविका, शिक्षा-प्रशासन आदि का ऐसा पुनर्गठन किया कि हिन्दू-मुसलमान संगठित होकर पुनः विद्रोह न कर सकें, उनमें सांप्रदायिक मतभेद निरंतर बढ़ते जाएँ ताकि वे दोनों ब्रिटिश शासन से मुक्ति पाने के लिए राष्ट्रीय स्वातंत्र्य-संघर्ष में एक होकर भाग न ले सकें।

इसके लिए अंग्रेजों ने जातीय भाषा खड़ी बोली को जो हिन्दी-प्रदेश के हिन्दी-मुसलमानों के व्यापारिक, दैनिक कामकाज और बोलचाल की मातृभाषा थी, उसे सीधे धर्म से जोड़कर 'हिन्दी' को हिन्दुओं और 'उर्दू' को मुसलमानों की भाषा बना दिया। जहाँ उन्होंने एक ओर लिपि-अलगाव से हिन्दी-उर्दू भाषा-विवाद को जन्म दिया, वहीं फारसी लिपि का सम्बन्ध इस्लाम से बताकर हिन्दू-मुसलमान झगड़े को भड़काया। तत्कालीन

1. सुरेन्द्रनाथ सेन, अठारह सौ सत्तावन (भूमिका), पृ० 17

हिन्दी-उर्दू पत्रकारिता पर भी इस भाषा राजनीति और विवाद तथा अंग्रेजी अलगाववादी नीति का स्थायी प्रभाव पड़ा था।

इसके अतिरिक्त अंग्रेज शासकों ने अपने आर्थिक लाभ तथा साम्राज्य के सुदृढ़ स्थायित्व के लिए जर्जर सामंती व्यवस्था को आखिर तक बनाये रखा।[1] उन्होंने रियासतों के कामकाज और कचहरियों में उर्दू को ही सरकारी मान्यता दी। इसीलिए सभी रियासती पत्रों की भाषा उर्दू-बहुल हिन्दी भाषा थी। अंग्रेजी इतिहासकारों ने मध्यकालीन भारत की क्रूर अत्याचारी मुस्लिम शासन के रूप में गलत तस्वीर पेश कर विद्वेष भाव को खुलकर पनपाया। लिपि और भाषा की इस अलगावपूर्ण नीति[2] ने मुद्रण और गतिशील पत्रकारिता के उस युग में गंभीर सांप्रदायिक मतभेद बढ़ाकर जातीय भाषा और राष्ट्रीयता के विकास में बहुत रोड़े अटकाये क्योंकि 1857 के पश्चात् सम्पूर्ण विश्व और भारत का घटना चक्र तेजी से घूम रहा था। ज्ञान, साहित्य तथा राजनीति में नई विधाओं, उद्भावनाओं और विषयों के विश्लेषण में दिन-प्रतिदिन हिन्दी पत्रकारिता को नये शब्द-भंडार की आवश्यकता अनुभव हो रही थी। उर्दू के 'मतरुकात' सिद्धान्त से आधुनिक जातीय भाषा का आधार निरंतर संकुचित होता गया। फलस्वरूप हिन्दी-उर्दू पत्रकारिता पर भी इस अलगाववादी नीति का स्थायी प्रभाव पड़ा। उनकी दिशा बदली, हिन्दी-उर्दू पत्रों के पाठक बँट गये। हिन्दी-उर्दू खड़ी बोली का विकास पृथक्-पृथक् हिन्दी-उर्दू पत्रकारिता के माध्यम से होने लगा।

राजा शिवप्रसाद द्वारा प्रकाशित हिन्दी में 'बनारस अखबार' और उर्दू में 'बनारस गजट' (1845 ई०) से हिन्दी-उर्दू के पृथक् संस्करण निकालने की अलगाववादी प्रवृत्ति धीरे-धीरे उभरने लगी थी उदाहरण स्वरूप अनेक उर्दू पत्रों के हिन्दी-संस्करण निम्नांकित थे—

सन्	उर्दू अखबार	हिन्दी-संस्करण	संपादक	स्थान
1852 ई०	नुरुलबसर	बुद्धि प्रकाश	सदासुख लाल	आगरा
1861	आफताबे आलम ताब	सूरजप्रकाश	गणेशी लाल	,,
,,	मुफीद-उल-खलाइक	सर्वोपकारक	शिवनारायण	,,
,,	मुहब्बे रियाया	प्रजाहित	हकीम जवाहर लाल	इटावा
,,	खैरखाहे खलाइक	जगलाभ चिंतक	सोहनलाल	अजमेर
1864	आबेहयात्	भारतखण्डामृत	पं० वंशीधर	आगरा

1. ए० आर० देसाई, भारतीय राष्ट्रवाद की सामाजिक पृष्ठभूमि, पृ० 250-51
2. मन्मथनाथ गुप्त, क्रांतिकारी आंदोलन का वैचारिक इतिहास, पृ० 45

सन्	उर्दू अखबार	हिन्दी संस्करण	सपादक	स्थान
1869 ई०	विद्यादर्श	विद्यादर्श	—	मेरठ
,,	आगरा एज्यूकेशनल गजट	आगरा एज्यू-केशनल गजट	सरकारी	आगरा
1873	अखबारे अंजुमने हिंद	भारत पत्रिका	ब्रिटिश इंडियन एसोसियेशन	लखनऊ
1874	मुहब्बे हिन्दी	नागरी प्रकाश	—	मेरठ

ध्यातव्य है कि इन हिन्दी-उर्दू पृथक् संस्करणों के (हिंदू) संपादक एक ही थे। इसका अभिप्राय यही हो सकता है उर्दू राजाश्रय प्राप्त शिक्षितों की भाषा थी जिसकी उपेक्षा नहीं की जा सकती थी। हिन्दी खड़ी बोली गद्य (नागरी लिपि) की लोकप्रियता और प्रगति तत्कालीन ऐतिहासिक परिवेश और आवश्यकता की उपज प्रतीत होती है। खड़ी बोली गद्य और 'हिन्दी पत्रकारिता की तीव्र प्रगति में अनेक प्रेरक तत्व कार्य कर रहे थे।

3.1.4. प्रेरक तत्व

1. तत्कालीन धार्मिक-सामाजिक सुधार आंदोलनों की आधार-भूमि वेदों-उपनिषदों आदि पौराणिक तथा संस्कृत वाङ्मय पर टिकी थी। 'आर्य समाज' के संस्थापक महर्षि दयानन्द ने अहिन्दी-भाषी होने पर भी अपने प्रसिद्ध ग्रंथ 'सत्यार्थ प्रकाश' को हिन्दी में प्रकाशित कर उसको 'आर्य भाषा' के रूप में प्रतिष्ठित किया था। अतः जैसे-जैसे राष्ट्रीय पुनर्जागरण और अतीत के पुनरुत्थान की भावना गहनतर होती गयी, हिन्दी भाषा और पत्रकारिता का सहज विकास उर्दू से पृथक् होता गया। देवनागरी खड़ी बोली हिन्दी में संस्कृत-वाङ्मय और धार्मिक ग्रन्थों के अनुवाद की माँग बढ़ जाने और कचहरियों में हिन्दी-प्रवेश आंदोलनों ने हिन्दी को लोकप्रिय बना दिया तथा उर्दू से पृथक् निज अस्मिता-निर्माण को गति प्रदान की। किन्तु अंग्रेजों की भेद-नीति ने ही इस हिन्दी-उर्दू भिन्नता में सांप्रदायिक भाव पैदा किया था, दोनों की राहें और लक्ष्य ही नहीं बदल दिये, परस्पर विद्वेष, कटुता और प्रतिद्वंद्विता के विष-बीज भी बो दिये।

2. 1843 ई० से. पश्चिमोत्तर प्रदेश के (बंगाल से) पृथक् प्रांत बन जाने से प्रशासन और शिक्षा आदि में जन-भाषा हिन्दी की उपयोगिता का अनुभव किया जाने लगा था। पश्चिमोत्तर प्रदेश में शिक्षा खर्च पर 123000 रुपये की स्वीकृति मिली थी। आगरा, देहली के साथ बनारस आदि कॉलेजों में भी उच्च शिक्षण में अंग्रेजी-उर्दू के साथ हिन्दी-संस्कृत विभाग के अन्तर्गत (1849) पढ़ायी जाने लगी थी।[1] उच्च शिक्षा का माध्यम यद्यपि अंग्रेजी थी किन्तु प्राथमिक-माध्यमिक शिक्षा देशी भाषाओं के माध्यम से दी जाती थी। अंग्रेजी शिक्षा प्राप्त कर रहे भारतीयों की संख्या केवल 2 लाख 65 हजार

1. भारतीय साहित्य, जुलाई 1958, पृ० 84-85

थी,[1] जो कुल शिक्षा प्राप्त कर रहे भारतीयों में बाल्टी में बूंद के बराबर थी।[2] अत: अधिकांश मध्यवर्गीय शिक्षित जनता का पठन-पाठन, दैनिक कार्यकलाप, चिंतन अब भी हिन्दी में ही होता था। 1854 ई० में चार्ल्स 'वुड के शिक्षा-डिस्पैच' से निजी स्तर पर माध्यमिक शिक्षा पर जोर देने के कारण हिन्दी को अप्रत्यक्ष रूप में सहज बढ़ावा मिला था।

3. राजा शिव प्रसाद सितारे हिन्द ने अपने पत्र 'बनारस अखबार' (1845) में जातीय भाषा खड़ी बोली में 'मतरूकात सिद्धांत' द्वारा देवनागरी हिन्दी का पूर्ण उर्दूकरण कर सरकारी चमचागिरी का अपूर्व उदाहरण प्रस्तुत किया था। इस पत्र ने भारतीय समुदाय में तीव्र प्रतिरोध और प्रतिक्रिया की लहर पैदा कर दी थी। इस पत्र की भाषा का विरोध करने के लिए तत्कालीन परिवेश में अत्यन्त स्वाभाविक था कि अन्य पत्रकार शुद्ध हिन्दी पत्रकारिता की ओर उन्मुख होते क्योंकि उक्त पत्र की भाषा लोक-भाषा की प्रकृति के सर्वथा विपरीत थी। 'बनारस अखबार' की हिन्दी आम बोल-चाल की भाषा से कितनी पृथक् थी इसका अंदाजा हिन्दी की प्रारंभिक पत्रिकाओं 'गॉस्पल मैगजीन (1820) 'उदन्त मार्तण्ड' (1826) 'बंगदूत' (1829) आदि भाषा के उदाहरणों के तुलनात्मक विवेचन से लगाया जा सकता है। 'बनारस अखबार' की भाषा तत्कालीन प्रशासन और कचहरियों में प्रयोग होने वाली सरकारी भाषा थी जो सर्वसाधारण की बोलचाल की भाषा से नितांत भिन्न थी। इसका कारण स्पष्ट ही है कि राजा शिव प्रसाद यदि अपने पत्र को लोकप्रिय बनाने के लिए देवनागरी लिपि में उर्दू को न अपनाते तो न तो सरकार ही उसे संरक्षण देती, न रियासतों में उच्च वर्ग ही उसे अपनाता क्योंकि सरकारी नीति उर्दू बढ़ाने की थी।

अत: 'बनारस अखबार' की तीव्र प्रतिक्रिया स्वरूप विशुद्ध हिन्दी में अनेक पत्र-पत्रिकाएँ 'सुधाकर' (1850) 'बुद्धिप्रकाश' (1852) राजा लक्ष्मण सिंह का 'प्रजा हितैषी (1855) 'तत्वबोधिनी पत्रिका' (1865) आदि प्रकाशित हुईं।

3.1.5. राष्ट्रीय स्तर की पत्रकारिता : उदय एवं विकास

हिन्दी पत्रकारिता का सच्चा राष्ट्रीय स्वरूप और सहज लालित्य हिन्दी-उर्दू द्विभाषी पत्रों, हिन्दी-संस्करणों या विशुद्ध हिन्दी पत्र-पत्रिकाओं में लक्षित नहीं होता। उसके दर्शन पहली बार सन् 1868 ई० में भारतेन्दु हरिश्चन्द्र द्वारा संपादित 'कविवचन सुधा' में होते हैं। इसके प्रकाशन से हिन्दी पत्रकारिता में एक नया युग प्रारम्भ हुआ। उसे ठोस आधार और दिशा मिली। डा० राम विलास शर्मा के शब्दों में "भारतेन्दु ने 'कविवचन सुधा' के द्वारा हिन्दी में निर्भीक पत्रकार-कला का आदर्श लोगों के सामने रखा। उनसे पहले लोगों ने पत्र निकाले थे। उनमें से कोई इस लगन से एक निश्चित उद्देश्य के लिए

1. सर ए० क्रौपर, शिक्षा निदेशक, रिव्यू ऑफ एजूकेशन इन इण्डिया, 1886, पृ० 4
2. डा० ताराचंद, भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन का इतिहास

भारतेंदु के पत्र

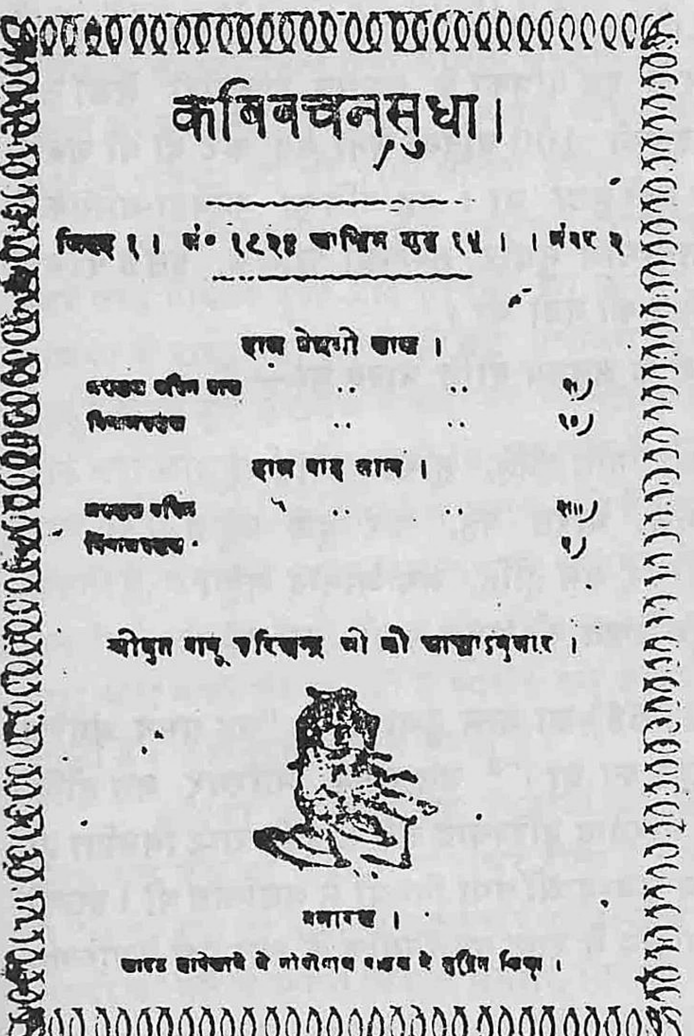
कबिबचनसुधा।

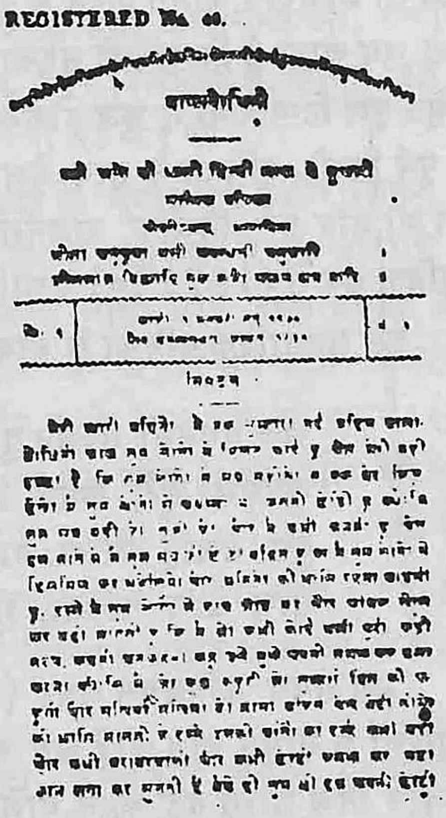
REGISTERED No. 60.

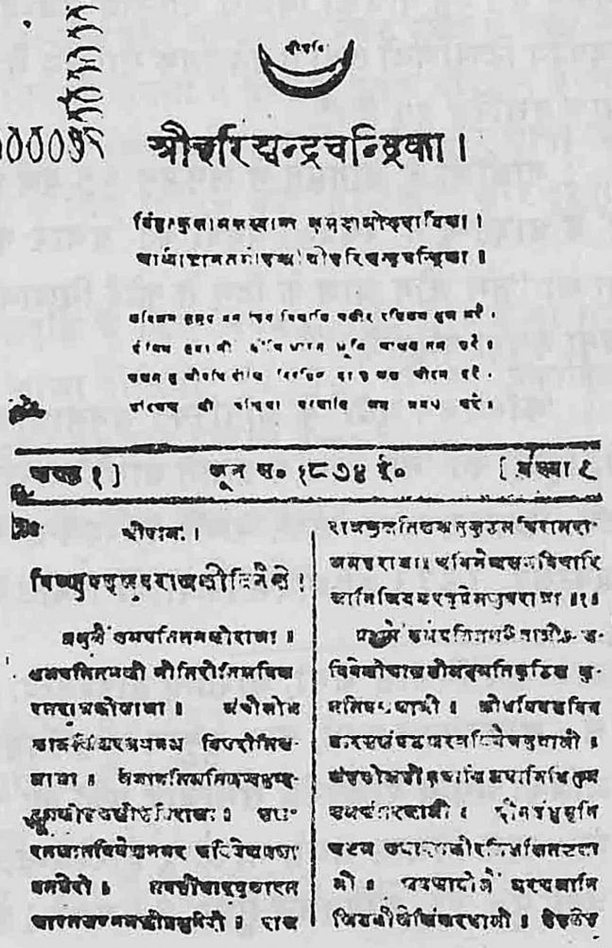
श्रीहरिश्चन्द्रचन्द्रिका।

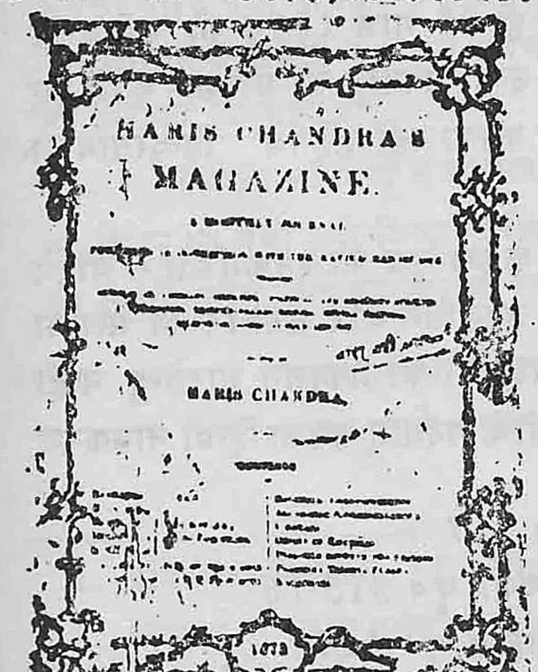
HARIS CHANDRA'S MAGAZINE.

HARIS CHANDRA.

नहीं लड़ा था ।"[1]

इस पत्रिका का महत्त्व हिन्दी में राष्ट्रीय भावों को जागृत करने, हिन्दी पत्रकारों को प्रेरणा देने तथा हिन्दी भाषा और पत्रकारिता को सहज जातीय स्वरूप प्रदान कर पाठकों की अभिरुचि जागृत करने में है।[2] इस पत्रिका की स्वाधीन चेतना का प्रमाण इसी बात से लग जाता है कि अंग्रेजी सरकार ने इस पत्रिका के स्वतन्त्र राजद्रोही लेखों तथा देश हित पूर्ण टिप्पणियों से क्रुद्ध होकर इसकी 100 प्रतियां लेनी बंद कर दी थीं जबकि इससे पूर्व किसी पत्रिका के साथ ऐसा नहीं हुआ था। यह पत्रिका कविता-मासिक से जनता की माँग पर निर्भीक राजनीति-समाज सुधार सम्बन्धी पाक्षिक, इसके पश्चात् साप्ताहिक रूप से (1875 ई०) प्रकाशित की गयी थी।

इस साप्ताहिक पत्रिका के आदर्श के अनुरूप नीति वाक्य था—

खल गगनसों सज्जन दुखी मति होहि, हरिपद मति रहे।
अपधर्म छूटै, स्वत्व निज भारत गहै, कर दुख बहै॥
बुध तजहि मत्सर, नारिनर सम होहि, जग आनन्द लहै।
तजि ग्राम कविता, सुकविजन की अमृत बानी सब कहै॥

जिस समय 'कविवचन सुधा' (1868) का जन्म हुआ था। "वह समय अंगरेज अधिकारियों के सामने हाथ जोड़े खड़े रहने का था।"[3] उस समय 'नारिनर सम होहि' और 'स्वत्व निज भारत गहै' कहने वाले भारतेन्दु हरिश्चन्द्र जैसे साहसी राष्ट्र निर्माता ही हो सकते थे। यह पत्रिका विविध राष्ट्रीय समस्याओं तथा विषयों से समन्वित थी। इसकी संपादकीय टिप्पणियों तथा सर्जनात्मक साहित्य में राष्ट्र नव-निर्माण के स्वर पूर्ण-तेजस्विता के साथ मुखरित हुए हैं।[4]

गांधीजी के आगमन से लगभग 45 वर्ष पूर्व ही 23 मार्च 1874 को 'कविवचन सुधा' में भारतेन्दु ने स्वदेशी वस्त्रों का प्रचार कर उन्हें अपनाने की प्रतिज्ञा करते हुए लिखा था "हम लोग आज के दिन से कोई विलायती कपड़ा नहीं पहिनेंगे···हिन्दुस्तान ही का बना कपड़ा पहिनेंगे।"[5]

'कविवचन सुधा' के अतिरिक्त जनसाधारण के दुख-सुख को पत्रकारिता से जोड़ने वाली, हिन्दी को 'नई चाल में ढालने वाली' राष्ट्रीय उद्बोधन और सरकार की भर्त्सना के लिए छिपकर व्यंग्य करने वाली 'हरिश्चन्द्र मैगजीन' का प्रकाशन भारतेन्दु ने ही 15 अक्टूबर, 1873 को प्रारंभ किया था। आठ अंकों के पश्चात् इसका हिन्दी नामकरण

1. डा० राम विलास शर्मा, भारतेन्दु हरिश्चन्द, पृ० 117
2. सं० झाबरमल्ल शर्मा, बाल मुकुन्द गुप्त निबंधावली, पृ० 315-16
3. अंबिका प्रसाद वाजपेयी, समाचार पत्रों का इतिहास, पृ० 129
4. डा० राम विलास शर्मा, भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, पृ० 32
5. वही, पृ० 33, कविवचन सुधा, 23 मार्च 1874

'हरिश्चन्द्र चंद्रिका' कर दिया गया। यह कागज और छपाई में आकर्षक, विविध विषयों से समन्वित तथा ज्ञानवर्द्धक सामग्री से युक्त थी। इस पत्रिका ने अंध रूढ़िवादिता, औपनिवेशिक साम्राज्यवाद तथा सांमती संस्कृति के विरुद्ध कभी खुल्लम-खुल्ला, कभी राजभक्ति की चाशनी में भिगोकर रोषपूर्ण व्यंग्यात्मक तेवर दिखलाये थे, फलतः इस सजग राष्ट्रीय पत्रिका की भी 100 प्रतियाँ सरकार ने लेनी बंद कर दी थी।

अंग्रेजी-हिन्दी भाषा में प्रकाशित इस पत्रिका के युगानुकूल गंभीर चिंतन, उच्च स्तर तथा वैविध्य युक्त प्रौढ़ सामग्री का आभास उसके अग्रलेखों से हो जाता है। इसी पत्रिका में राष्ट्र नर्वाचितन को सर्व प्रचलित जातीय भाषा और धारा प्रवाह शैली में प्रस्तुत करते हुए संपादक ने कहा था 'पब्लिक ओपिनियन अर्थात् सब साधारण लोगों की राय क्या वस्तु है ? और इसमें कितना जोर है और इसके लिए क्या हो सकता है ? यह प्रश्न ठहरा तो इसका साधारण उत्तर यही है कि यह वह वस्तु है जो संसार को एक कर सकती है, गंगा की धारा हिमालय पर चढ़ाकर ले जा सकती है, सूर्य को पश्चिम में उगा सकती है और चाहे तो ईश्वर को भी पकड़कर कठपुतली की भाँति नचा सकती है। यह मेरा कहा कभी असत्य नहीं है क्योंकि दस आदमी मिलकर कठिन काम को भी सहल कर सकते हैं। फूही-फूही तलाब भरता है।"[1]

पत्रिका की आधुनिक विचारों की छटा, जनतंत्रीय चेतना, ऐभ्यभाव तथा आधुनिक गद्य का संगम दृष्टिगोचर होता है। आचार्य रामचन्द्र का कथन कितना सटीक है "हिन्दी गद्य का ठीक परिष्कृत रूप पहले-पहल इसी चन्द्रिका में प्रकट हुआ।[2] जिस प्यारी हिन्दी को देश ने अपनी विभूति समझा, जिसको जनता ने उत्कंठा पूर्वक दौड़कर अपनाया, उसका दर्शन इसी पत्रिका से हुआ।"[3] उन्होंने देवनागरी-फारसी लिपि और भाषा विवाद के समाधान में सजीव परिष्कृत जनभाषा के लिए व्यापक उदार दृष्टिकोण और दूरदर्शिता का परिचय दिया था।[4]

संपादक भारतेन्दु ने धार्मिक जागृति के लिए 'भगवत तोषिणी' पत्र का संपादन भी किया था तथा स्त्री-शिक्षा के लिए 'बाला बोधिनी' (1874) पत्रिका प्रकाशित की थी जिसके शीर्ष छन्द का उत्कृष्ट नारी-नर समभाव दृष्टव्य है—

जो हरि सोई राधिका जो शिव सोई शक्ति।
जो नारी सोई पुरुष या मैं कछु न विभक्ति।[5]

---

1. हरिश्चन्द्र मैगजीन, 15 अप्रैल 1874, पृ० 197
2. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, हिन्दी-साहित्य का इतिहास, पृ० 421
3. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, पूर्व उद्धृत, पृ० 421
4. हरिश्चन्द्र मैगजीन 15 अक्टूबर 1873 ई० (अंग्रेजी भाषा में लिखित लेख), पृ० 11-12
5. बालाबोधिनी, मई 1875, मुखपृष्ठ

इसकी मई, 1875 की उपलब्ध प्रति में देव-थौरानी, छोटे संबंधियों से गृहस्थ के व्यवहार, खर्च करने की व्यवस्था, बालकों के लालन-पालन आदि विषयों के साथ 'नीति विषयक इतिहास' तथा 'मुद्राराक्षस' के नाटक के अनुवाद का धारावाहिक अंश भी प्रकाशित हुआ है। इस पत्रिका से संपादक के युगों से प्रताड़ित नारीवर्ग के प्रति संवेदनशील और जागरूक प्रजातांत्रिक रुख का निग्दर्शन हो जाता है।

इस पत्रिका में भी भारन्तेन्दु ने सरल-सुबोध आम भाषा में, महिलाओं को व्यावहारिक दृष्टान्त देकर राष्ट्रीय एकता की लघुतम इकाई परिवार को एक सूत्र में बांधने के लिए शिक्षा दी थी—'झाड़ू को देखो कि जब तक यह बंधी है तब तक कोई भी सबल इसके तोड़ने को सामर्थ नहीं होता और आपकी झाड़ू में सामर्थ है कि मानो कूड़े को बात की बात में बाहर निकाल दे। परन्तु जब उसके बंधन खुल के बिखर जावें तो उस समै सारा बल उसका नाश ही कर डालें। इसी प्रकार जब तक तुम्हारा घर झाड़ू की भाँति एकता भाव करके बंधा हुआ है तुम भी सामर्थ हो।[1]

उत्तर उन्नीसवी शती में भारतेन्दु हरिश्चद्र ही हिन्दी पत्रकारिता के सूत्रधार रहे अतः इसे 'भारतेन्दु युग' कहना अनुपयुक्त नहीं होगा। इस काल में हिन्दी पत्र-पत्रिकाओं की संख्या लगभग 350 के लगभग पहुंच गयी थी।[2] अतः इस सम्पूर्ण काल की प्रमुख पत्र-पत्रिकाओं को दो वर्गों में विभाजित करके प्रस्तुत किया जा सकता है—

उत्थान युग (1868-1885 ई०)

कविवचन सुधा (1868) से लेकर 1885 ई० तक उत्थान कालीन प्रमुख हिन्दी पत्र-पत्रिकाएं निम्नलिखित थीं—

सन्	पत्र का नाम	संपादक	स्थान	रूप-आदि
1868 ई०	कविवचन सुधा	भारतेन्दु हरिश्चन्द्र	बनारस	मासिक-पाक्षिक साप्ताहिक
1869	समय विनोद तत्संयुक्त सुदर्शन समाचार	बद्रीदत्त ज्योतिर्विद	नैनीताल	पाक्षिक
,,	उदयपुर गजट	मुंशी नवल किशोर	उदयपुर	मासिक
1870	बुद्धि विलास	—	जम्मू	,,
,,	ज्ञानप्रकाश	—	कानपुर	साप्ताहिक
1871	अल्मोड़ा अखबार	मुंशी सदानंद सनवात	अल्मोड़ा	साप्ताहिक

1. ब्राला बोधिनी, मई 1875, पृ० 34
2. डा० राजेन्द्र प्रसाद शर्मा, गद्य के निर्माता बाल कृष्ण भट्ट, पृ० 150

सन्	पत्र का नाम	संपादक	स्थान	रूप-आदि
1872 ई०	हिन्दी दीप्ति प्रकाश	प्र० कार्तिक प्रसाद खत्री	कलकत्ता	साप्ताहिक
,,	बिहार बन्धु	पं० केशव राम भट्ट	कलकत्ता, पटना	,,
1873	प्रिंस आफ वेल्स गजट	—	मुरादाबाद	,,
,,	चरणाद्रि चन्द्रिका	जयराम	काशी	,,
1874	नाटक प्रकाश	रतन चन्द्र	प्रयाग	मासिक
,,	भारत बंधु	तोताराम वर्मा	अलीगढ़	साप्ताहिक
,,	सदादर्श	लाला श्री निवास दास	दिल्ली	,,
1875	सकल संबोधिनी पत्रिका	सरदार संतोष सिंह	अमृतसर	मासिक
,,	नीतिप्रकाश	कन्हैया लाल	लुधियाना	,,
,,	आनन्द लहरी	धीरज शास्त्री	बनारस	साप्ताहिक
1876	काशी पत्रिका	बालेश्वर प्रसाद	,,	,,
,,	सुदर्शन समाचार	मुरलीधर	प्रयाग	मासिक
1877	मित्र विलास	पं० मुकुन्द राम	लाहौर	साप्ताहिक
,,	भारत दीपिका	—	—	—
,,	भारत हितैषी	—	—	—
,,	हिन्दी प्रदीप	पं० बाल कृष्ण भट्ट	प्रयाग	मासिक
,,	नागरी पत्रिका	सदासुखलाल	,,	साप्ताहिक
1878	ज्ञानचन्द्र	रतननाथ	,,	,,
,,	भारत मित्र	पं० छोटू लाल मिश्र	कलकत्ता	पाक्षिक-साप्ताहिक-दैनिक
,,	सज्जन विनोद	कृष्णलाल	आगरा	साप्ताहिक
,,	शुभ चिंतक	—	कानपुर	—
,,	काशी पंच	—	काशी	साप्ताहिक
,,	जयपुर गजट	बाबू महेन्द्र नाथ सेन	जयपुर	मासिक
1879	सारसुधानिधि	सदानन्द मिश्र	कलकत्ता	साप्ताहिक
,,	सज्जन कीर्ति सुधाकर	महाराणा सज्जन सिंह	उदयपुर	,,
1880	उचित वक्ता	दुर्गा प्रसाद मिश्र	कलकत्ता	,,

सन्	पत्र का नाम	संपादक	स्थान	रूप-आदि
1880 ई०	काशी पंच	—	काशी	साप्ताहिक
,,	क्षत्रिय पत्रिका	बाबू रामदीन सिंह	बांकीपुर	मासिक
1881	आनंद कादम्बिनी	बदरी नारायण, चौधरी 'प्रेमधन'	मिर्जापुर	,,
1882	प्रयाग समाचार	देवकी नंदन तिवारी	प्रयाग	मासिक
1883	वैष्णव पत्रिका	पं० अंबिका दत्त व्यास	काशी-भागलपुर	,,
,,	इन्दु	—	लाहौर	,,
,,	कविकुल कुञ्ज दिवाकर	पं० रामनाथ शुक्ल	—	,,
,,	जग विलास	पं० विंध्याचल प्रसाद	बांकीपुर	,,
,,	सदाचार मार्तण्ड	पं० लालचन्द्र शास्त्री	जयपुर	,,
,,	भारतेन्दु	पं० राधाचरण गोस्वामी	वृन्दावन	,,
,,	इन्द्रप्रस्थ प्रकाश	जयंती प्रसाद शर्मा	दिल्ली	,,
,,	काशी समाचार	बिहारी सिंह	काशी	,,
,,	सत्यप्रकाश	राम वंशी लाल	बरेली	,,
,,	दिनकर प्रकाश	रामदास वर्मा	लखनऊ	,,
,,	ब्राह्मण	पं० प्रताप नारायण मिश्र	कानपुर	,,
,,	पीयूष प्रवाह	पं० अम्बिका दत्त	भागलपुर	,,
1884	चम्पारन हितकारी	—	बेतिया	,,
,,	भारत जीवन	रामकृष्ण वर्मा	काशी	साप्ताहिक
1885	हिन्दुस्तान	राजाराम पाल सिंह और संपादकगण	कालाकांकर	दैनिक
,,	भारतोदय	बाबू सीताराम	कानपुर	,,
,,	भारत प्रकाश	बनवारी लाल	मुरादाबाद	मासिक
,,	सत्यप्रकाश	पं० ज्वाला प्रसाद	आगरा	,,
,,	विद्याविलास	पं० दुर्गाप्रसाद मिश्र	कलकत्ता	,,
,,	भारत पंचामृत	बाल गोविंद सिंह	,,	,,
,,	काव्यामृत वर्षिणी	शिवदत्त मिश्र	लखनऊ	,,
,,	भारत चन्द्रोदय	गुरुबख्श सिंह	बिठूर	,,

इन पत्र-पत्रिकाओं में से अब कुछ ही पत्रों की प्रामाणिक सामग्री और मूल जिल्दें उपलब्ध हैं। इनमें से 'समय विनोद', 'हिन्दी प्रदीप', 'भारत मित्र', 'सार सुधानिधि',

सरस्वती

सचित्र हिन्दी मासिक पत्रिका

[काशी नागरीप्रचारिणी सभा के अनुमोदन से प्रतिष्ठित]

फरवरी सन् १९०० ई०

भाग १ — संख्या १

सम्पादक समिति

बाबू जगन्नाथ दास (रत्नाकर) बी.ए., बाबू श्यामसुन्दर दास, बी. ए.

बाबू राधाकृष्णदास, पंडित किशोरी लाल गोस्वामी

बाबू कार्तिक प्रसाद खत्री

वार्षिक मूल्य ३) अग्रिम — मूल्य प्रति संख्या ।-)

इण्डियन प्रेस, प्रयाग

से छप कर प्रकाशित

'बिहार बन्धु', उचित वक्ता', 'आनन्द', 'कादम्बिनी', 'ब्राह्मण', 'पीयूष प्रवाह', 'भारत जीवन' आदि के कुछ अंक या जिल्दें उपलब्ध हैं जिनके आधार पर तत्कालीन पत्रकारिता की राष्ट्रीय चेतना और वैशिष्ट्य का अंकन किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त राष्ट्रीय संग्रहालय (National Archives) में उपलब्ध गुप्त दस्तावेजों, तथा नेटिव न्यूज पेपर्स से भी इनमें से कुछ पत्र-पत्रिकाओं की उग्र राष्ट्रीयता का विवरण मिल जाता है।

प्रसार काल (1886-1900 ई०)

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के देहावसान (1885 ई०) के बाद से 1900 ई० 'सरस्वती' पत्रिका के उदय तक भारतेन्दु युगीन प्रवृत्तियों का ही प्रसार काल रहा था अतः इसे भी साथ ही विश्लेषित करना युक्तिसंगत होगा।[1]

1886-1900 ई० में निम्नलिखित पत्र-पत्रिकाएँ प्रकाशित हुई थीं[1]—

सन्	पत्र का नाम	संपादक-संचालक	स्थान	रूप
1886 ई०	रसिक पंच	पं० बलभद्र मिश्र	प्रयाग	कविता-मासिक
,,	सुख संवाद	पं० लक्ष्मण प्रसाद ब्रह्मचारी	लखनऊ	मासिक
,,	सत्य दीपक		बम्बई	—
1887	विक्टोरिया सेवक	—	—	—
,,	शुभ चिंतक	पं० राम गुलाम अवस्थी	जबलपुर	साप्ताहिक
,,	आयुर्वेदोद्धारक	पं० दत्त राय चौबे	मथुरा	मासिक
,,	भारत भ्राता	संचालक-लाल बलदेव सिंह संपा०—भगवान सिंह	रीवां	साप्ताहिक
,,	गुर्जर समाचार हिन्दी-गुजराती	पं० राम नारायण	मथुरा	मासिक
,,	प्रयाग मित्र	(देशोपकारक प्रेस)	प्रयाग	पाक्षिक
1888	सभा पत्र	हर सहाय मल और मास्टर भूरामल	मुरादाबाद	
,,	भारत भगिनी	श्रीमती महादेवी	प्रयाग लाहौर	पाक्षिक
1889	विचार पत्र	चिमन लाल	इटावा	मासिक
,,	भारत वर्ष	पं० रामनारायण वाजपेयी	बिठूर कानपुर	मासिक
,,	प्रजा हितैषी	अज्ञात	जबलपुर	,,
,,	आरोग्य जीवन	पं० गजानन राव	प्रयाग	,,
,,	विद्या धर्म दीपिका	पं० चन्द्रशेखर धर मिश्र	गोरखपुर चम्पारन	,,

1. धार्मिक-जाति संबंधी पत्र-पत्रिकाओं की सूची पृथक अध्याय 4 में है।

वाले यदि याग के मुकवि रत्नाकर है ॥

"सुकविता यद्यस्ति राज्येन किम्"

॥ रसिक बाटिका ॥

अर्थात्

रसिक समाज कानपुर की नवरसमय मासिक पत्रिका,
बाबू गजराज लाल गुप्त, अवैतनिक प्रकाशक
चौहट्टा कानपुर द्वारा प्रकाशित

भाग २ | २० अप्रैल सन् १९०८ ई० / बैशाख सम्वत् १९६५ वि० | क्यारी १

॥ नियम ॥

१—कुल नगर में तथा बाहर सर्व साधारण से अग्रिम वार्षिक १, रु० मात्र, राजा महाराजा और रईसों से उनकी इच्छानुसार एक क्यारी का मूल्य ८,

२—नमूने की क्यारी बिना मूल्य दी जायगी, यदि ऐसा अस्वीकार हो तो पत्र द्वारा प्रकाशक को सूचना देना चाहिये नहीं तो दूसरी क्यारी वी०पी० समेत डाक द्वारा भेजी जायगी।

३—एक बार विज्ञापनों की छपाई … पंक्ति और विवरण छपाई १, रु० है अधिक छपाई के लिये प्रकाशक को लिखिये।

४—हिन्दी गद्य तथा पद्य के साहित्य विषयक उत्तम लेख सादर स्थानानुसार छाप दिये जायेंगे परन्तु अस्वीकृत लेख लौटाने का नियम नहीं है।

५—रसिक वाटिका सम्बन्धी पत्र रुपया मनीआर्डर नोट टिकट और पुस्तक प्रकाशक के नाम भेजना चाहिये

सन्	पत्र का नाम	संपादक-संचालक	स्थान	रूप
1889 ई०	सुगृहिणी (स्त्री-पत्रिका)	श्रीमती हेमन्त कुमारी चौधरी	शिलांग	मासिक
,,	बुद्धि प्रकाश	पं० चन्द्र शंकर गौड़	लखनऊ	पाक्षिक
,,	द्विज पत्रिका	दीनदयाल सिंह	बाँकीपुर	,,
,,	तराई गजट	लखपतराय तथा टेकचंद	तराई जसपुर	साप्ताहिक
,,	भारत दर्पण	पं० विष्णु नाथ ब्रह्मचारी	कलकत्ता	साप्ताहिक
,,	भारत मार्तण्ड	,,	,,	,,
,,	मित्र	पं० दामोदर विष्णु सप्रे	काशी	,,
,,	राजस्थान समाचार	मुंशी समर्थदान	अजमेर	मासिक-पाक्षिक-दैनिक
1890	कवितेंदु			
	"कृषिकारक अथवा शेतकरी"	श्री गणेश नारायण घोरवड़े संखाराम चिमण जी गोले	अमरावती	मासिक
,,	सरस्वती विलास	नन्हे लाल	नरसिंहपुर नागपुर	मासिक
,,	गोरक्षा		नागपुर	मासिक
,,	निगमागम चन्द्रिका	पं० ठाकुर प्रसाद शर्मा 1904 में अमृत लाल चक्रवर्ती	मेरठ मथुरा काशी	
,,	पुष्कर दीप	—	पुष्कर जि० अजमेर	मासिक
,,	बाल सुधा	—	होशंगाबाद	,,
,,	मोतीचूर	मुंशी अमीर हसन	बांकीपुर	,,
,,	सत्य	अज्ञात	मुरादाबाद	,,
,,	साहित्य सरोज	,,	मेरठ	,,
,,	हिन्दी पंच	अज्ञात	अलीगढ़	मासिक
,,	सज्जन सुधापान	पं० बैजनाथ व्यास	तिलहारा	साप्ताहिक
,,	सरस्वती विलास		काशी	,,
,,	तिमिर नाशक	पं० कृपाराम	काशी	,,
,,	जयपुर समाचार	बाबू अमर नारायण माथुर	जयपुर	,,
,,	चम्पारन चन्द्रिका	पं० भुवनेश्वर मिश्र	सदर बेतिया	,,

सन्	पत्र का नाम	संपादक-संचालक	स्थान	रूप
1890 ई०	हिन्दी बंगवासी	पं० अमृतलाल चक्रवर्ती	कलकत्ता	साप्ताहिक
,,	सरस्वती प्रकाश	—	—	पाक्षिक
,,	सर्वहित	पं० राम प्रताप शर्मा	बूंदी	पाक्षिक वार्षिक
1891	खिचड़ी समाचार	माधव प्रसाद खत्री	मिर्जापुर	साप्ताहिक
,,	कवि और चित्रकार	पं० कुन्दन लाल	फतहगढ़	त्रैमासिक
,,	धूर्त्त पंच	दामोदर प्रसाद शर्मा	कलकत्ता	मासिक
,,	विद्या प्रकाश	राम नारायण	लखनऊ	मासिक
,,	बाल हितकर	—	,,	,,
,,	नौकाजगहित	बंशीधर	बनारस	,,
,,	रामजनमित्र	पं० गणपत राव	,,	,,
,,	रामपताका	पं० राधा मोहन शुक्ल	प्रयाग	,,
,,	शिक्षक	एम० एल० शुक्ल	मथुरा	मासिक
,,	जगत मिश्र	पं० क्षेत्रपाल शर्मा	,,	,,
,,	व्यापार	सीताराम	कानपुर	,,
1892	व्यापार हितैषी	हनुमान प्रसाद	काशी	साप्ताहिक
,,	भारत भूषण	बाबू गोपाल राम गहमरी	बम्बई	मासिक
,,	भारत हितैषी	विशनस्वरूप	फर्रूखाबाद	,,
,,	ब्राह्मण हितकारी	पं० कृपा राम	काशी	,,
,,	सरस्वती प्रकाश	बनवारी लाल	,,	,,
,,	ब्रजवासी	रा० ल० वर्मन क्षेत्रपाल		
,,	मालवा समाचार	—	इन्दौर	,,
1893	नागरी नीरद	प० बदरी नारायण चौधरी प्रेमधन	मिर्जापुर	साप्ताहिक-मासिक
,,	भारत प्रताप	प्रताप कृष्ण आगा	मुरादाबाद	मासिक
,,	सुधा सागर	पं० छदम्मी लाल दुबे डॉ० भूदेव प्रसाद	कानपुर	,,
,,	सत्यवक्ता	गोपाल प्रसाद	होशंगाबाद	,,
,,	साहित्य सुधानिधि	देवकीनन्दन खत्री	मुजफ्फरपुर	मासिक
1894	वनिता हितैषी	संचा०—सीताराम सं०—भाग्यवती देवी गहलोत	कानपुर काकेड़ी	,,
,,	कलकत्ता समाचार	—	कलकत्ता	साप्ताहिक

सन्	पत्र का नाम	संपादक-संचालक	स्थान	रूप
1894 ई०	रत्नाकर	पं० शिवराम पांडे	प्रयाग	मासिक
,,	सर्वहितैषी	पं० रामस्वरूप बनवारी लाल	मुरादाबाद	मासिक साप्ताहिक
,,	श्री हरिश्चन्द्र कौमुदी	पंचमसिंह वर्मा	गया	
,,	सारन-सरोज	अवध बिहारी शरण सारस्वत	छपरा	,,
,,	न्याय पत्र	विद्या वर्द्धिनी सभा	प्रयाग	,,
,,	नाट्य पत्र	विद्यावर्द्धिनी सभा	प्रयाग	,,
,,	दिनचर्या	पं० मोहन लाल विष्णु	नाथद्वारे	मासिक
,,	प्रभाकर	लाल पांड्या	बम्बई	,,
1895	संसार दर्पण	पं० अयोध्या प्रसाद	झाँसी	,,
,,	स्वतन्त्र	—	लखनऊ	साप्ताहिक
,,	एलोपैथिक डाक्टर	जगन्नाथ शर्मा	प्रयाग	मासिक
,,	विद्या विनोद		बाँकीपुर	,,
,,	प्रश्नोत्तर	भिखारी शरण	काशी	,,
,,	कुसुमाञ्जली	बाबू बलुक प्रसाद	,,	,,
,,	दीनबंधु		फर्रुखाबाद	,,
,,	खद्योत	अमृतसर	,,	,,
1896	नागरी प्रचारिणी पत्रिका	नागरी प्रचारिणी सभा बाबू श्याम सुंदर दास आदि	काशी	,,
,,	श्री व्यंक्टेश्वर समाचार	सेठ खेम राज श्रीकृष्णदास	बम्बई	साप्ताहिक
,,	काशी वैभव		काशी	मासिक
,,	भारत हितैषी	—	बम्बई	,,
,,	न्याय रत्न		छिन्दवाड़ा	,,
1896	प्रताप	श्री ज्वाला प्रसाद	अलीगढ़	साप्ताहिक
,,	उदयपुर गजट	राज्य पत्र	उदयपुर	मासिक
,,	रसिक मित्र	ब्रजभूषण लाल गुप्त	कानपुर	,,
,,	रसिक बाटिका	,,	,,	,,
1897	कवि और समालोचक	—	बलिया	,,
,,	भारतोपदेशक	ब्रह्मानन्द सरस्वती	मेरठ	,,
,,	चन्द्रिका	हजारी लाल	लखनऊ	,,
,,	त्रिवेणी तरंग	विद्या-धर्म वर्द्धिनी सभा	प्रयाग	,,

सन्	पत्र का नाम	संपादक-संचालक	स्थान	रूप
1897 ई०	स्वदेशी वस्तु प्रचारक	—	पंजाब	,,
,,	शिक्षा	पं० सकल नारायण शर्मा	बाँकीपुर	साप्ताहिक
1898	भारत मार्तण्ड	पं० रामकिरण शर्मा 'श्याम'	जोधपुर	,,
1899	तन्त्र प्रभाकर	पं० कन्हैया लाल तथा पं० बलदेव प्रसाद मिश्र	मुरादाबाद	,,
,,	नृत्य पत्र	देवकी नंदन	प्रयाग	,,
,,	प्रेम पत्रिका	पं० मनोहर लाल मिश्र	कानपुर	,,
,,	देश हितकारी	—	मेरठ	,,
,,	सर्वहितकारक	लाला देवीदास	अल्मोड़ा	मासिक-साप्ताहिक
1900	सरस्वती	श्याम सुंदर दास आदि	प्रयाग	मासिक
,,	काव्य कलानिधि	महावीर प्रसाद मालवीय	कोंद मिर्जापुर (वर्तमान ज्ञानपुर)	,,
,,	काव्य-सुधानिधि	राम भरोसे शर्मा चतुर्वेदी	काशी	,,
,,	सुदर्शन	पं० माधव प्रसाद मिश्र बाबू देवकी नंदन खत्री		
,,	छत्तीसगढ़ मित्र	माधव राव सप्रे राम राय चिंचोलकर	विलासपुर	,,
,,	बड़ाबाजार गजट	बाबू राम लाल	कलकत्ता	साप्ताहिक

हिन्दी पत्रकारिता : विशिष्ट रेखाएँ

तत्कालीन पत्र-पत्रिकाओं की लम्बी सूची (धार्मिक-जाति सम्बन्धी पत्र-पत्रिकाओं की सूची पृथक अध्याय 4 में है) देखकर ही पत्रकारिता के तीव्र विकास का अनुमान लगाया जा सकता है। उत्थानकाल (1868-1885) में लगभग 2 दैनिक, 30 साप्ताहिक, 5 पाक्षिक, 35 मासिक तथा प्रसार काल (1886-1900) में लगभग 31 साप्ताहिक, 7 पाक्षिक तथा 60 मासिक-पत्र-पत्रिकाएँ प्रकाशित हुईं। इस जागरण के दौर में पत्रकारिता राष्ट्र-आंदोलन और विषय-विशेषज्ञता की ओर बढ़ी। उदाहरण स्वरूप इस काल में नारी-वर्ग के लिए जहाँ 'बालाबोधिनी', 'भारतभगिनी', 'सुगृहिणी', 'वनिता हितैषी' आदि पत्रिकाएँ प्रकाशित हुईं वही न्याय, नृत्य, नाट्य, कृषि, वाणिज्य, कविता, स्वदेशी वस्तु प्रचार तथा बालकों के लिए पृथक्-पृथक् पत्र प्रकाशित किये जाने लगे थे।

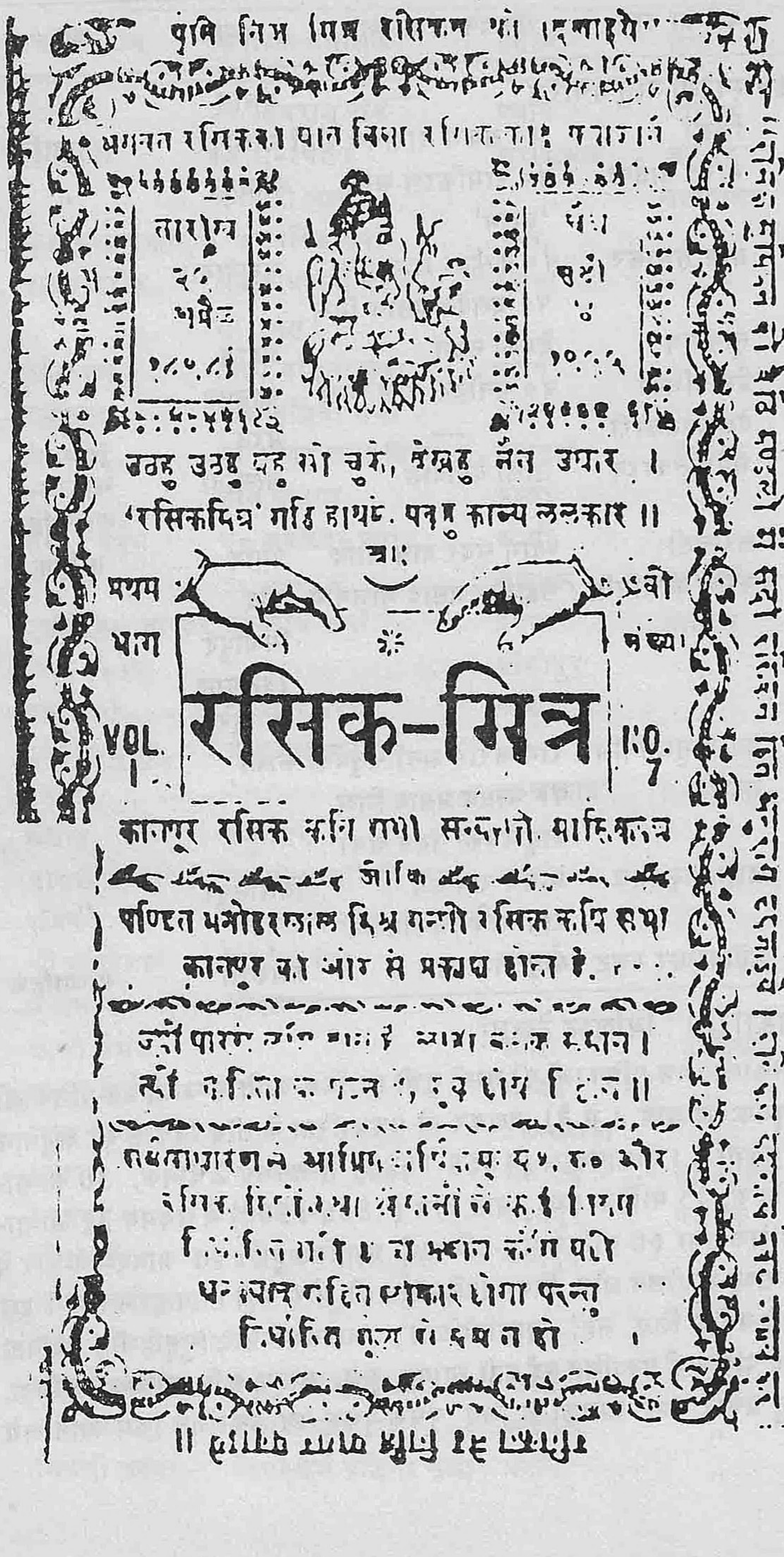
प्रथम
भाग
संख्या
VOL. I
रसिक-मित्र
NO. 7

हिन्दी पत्रकारिता की राष्ट्रीय-चेतना तथा स्वरूप का परिचय प्राप्त करने के लिए प्रतिनिधि (उपलब्ध) पत्र-पत्रिकाओं के नीति, मूल्य, संपादकीय सामग्री तथा समाचारों आदि का समग्ररूप में विवेचन करना अधिक समीचीन होगा क्योंकि सभी पत्र-पत्रिकाओं के पृथक्-पृथक् विश्लेषण से अनावश्यक विस्तार होगा तथा शताधिक (लगभग 350) पत्र-पत्रिकाओं का निरूपण करना यहाँ संभव भी नहीं है।

6. **उद्देश्य**—जैसा कि स्पष्ट है कि जागरणकालीन पत्र-पत्रकारिता का मूल उद्देश्य धनार्जन नहीं था। 'हिन्दी प्रदीप' ने प्रथम अंक में ही स्पष्ट किया था "मेरा मुख्य उद्देश्य देश की भलाई है—पत्र को प्रकाशित करने में कदापि यह प्रयोजन नहीं है कि मुझे चलाकर रुपये एकत्र करें बल्कि देश की बुराइयों का शोधन, भलाई का संचार और उन्नति महापुरुषों का मुख्य तात्पर्य है।"[1] 'भारत जीवन' ने 'प्रजा का दुखड़ा रोना' तथा राष्ट्र-एकता मुख्य कर्तव्य बताया।[2] तत्कालीन जाति-पत्र भी संकीर्णता में न बँधे होकर सभी जाति और वर्ग के लोगों के लिए थे।

तत्कालीन पत्रकारिता भाषा, समाज, साहित्य आदि नव-निर्माण के बहुविधि उद्देश्यों को लेकर प्रकाशित हुई थी 'सारसुधानिधि' ने अपने अनेक प्रयोजनों का उल्लेख किया था 'भारतवासियों का श्रम-संशोधन, सतत् संस्कार स्थापन तथा इनके चित्त की स्थिरता और दृढ़ता का संपादन करना 'सारसुधानिधि' का प्रथम प्रयोजन है। दूसरा! जब तक देश की भाषा की उन्नति नहीं होती है तो सम्पूर्ण उन्नति को कौन पूछता है। —इसलिए यथार्थ हिन्दी भाषा का प्रचार करना और हिन्दी लिखने वालों की संख्या में वृद्धि करना सारसुधानिधि का दूसरा प्रयोजन है। तीसरा! देश-देशांतर की प्राचीन और सामयिक घटना प्रकाश करके स्वदेशियों के चक्षु-दर्शन कराना तीसरा प्रयोजन है। चौथा! भारतवासियों की मानसिक तथा शारीरिक शक्ति नितांत हीन और एकांत जीर्ण हो गई इसकी यथोचित औषधि द्वारा मनस्विता, ओजस्विता और तेजस्विता गुणों का प्रचार करना चौथा प्रयोजन है। पंचम! इस देश के लोग वाणिज्य-व्यापार करते हैं—इसलिए इसका प्रतिविधान, एकास्थापन सामयिक व्यवहार और सत्परामर्श देना सारसुधानिधि का पंचम प्रयोजन है।"[3]

कतिपय पत्र-पत्रिकाओं के मूल प्रयोजनों से स्पष्ट है कि वे जन-जागृति, जन-सुधार, हिन्दी-हिन्दुस्तान की प्रगति के उद्देश्य से प्रकाशित हुए थे।

7. **आदर्श जीवन-विधान**—तत्कालीन पत्रकारिता की आचार-संहिता, चरित्र तथा आदर्श क्या थे? आधुनिक परिपार्श्व में वह अपने मूल से कितनी संयुक्त और वियुक्त है? इस ज्वलंत प्रश्नों का प्रत्युत्तर कतिपय पत्र-अंशों से ही मुखर हो जाता है। 'उचित-वक्ता' का मत था कि स्वाधीनता खोकर राष्ट्र की चरमोन्नति भी वरेण्य नहीं है, 'पहली

1. हिन्दी प्रदीप, सितंबर 1877, पृ० 3
2. भारत जीवन 3 मार्च, 1884, पृ० 1-2
3. सारसुधानिधि, 13 जनवरी, 1879

उन्नति और अबकी उन्नति में अन्तर इतना ही है कि वह स्वाधीन भारत की उन्नति थी और यह पराधीन भारत की उन्नति हो रही है इस उन्नति में पदानत निर्वीर्य्य हम भारत कुल तिलकों की अगौरव के सहित गर्दन नीची हो जाती है।"[1]

'ब्राह्मण' ने बुलंद आवाज में कहा था "हम भिखमंगे नहीं कि केवल ग्राहकों की खुशामद का ख्याल रक्खें। हम भाट नहीं कि बड़े आदमियों और राजपुरुषों की निरी झूठी स्तुति गाथा गाया करें। जो हो सो हो हम ब्राह्मण हैं।"[2]

पत्रकार भारतेन्दु ने निर्भीक होकर देशवासियों को राष्ट्रीय चेतना की वेदी में अपने को हविष बनाते हुए आह्वान किया था "भारतवर्ष की सब अवस्था, सब जाति, सब देश में उन्नति करो—चाहे तुम्हें लोग निकम्मा कहें या नंगा कहें, कृस्तान कहें या भृष्ट कहें—कुछ डरो मत। जब तक सौ दो सौ मनुष्य बदनाम न होंगे, जात से बाहर न निकाले जाएँगे दरिद्र न हो जाएँगे, कैद न होंगे, वरंच जान से न मारे जाएँगे तब तक कोई देश नहीं सुधरेगा।"[3]

तत्कालीन पत्र और पत्रकारों के विचार, प्राणदायिनी ऊर्जा तथा उच्चादर्श न अर्थ-प्राप्ति से जुड़े थे, न पद या यश-प्राप्ति से। इन्होंने पत्रकारिता और रचनात्मक लेखन कर्म को पेशा न बनाकर राष्ट्र-धर्म तथा जीवन-कर्तव्य के रूप में ग्रहण किया—"हमें अपने लेख द्वारा धन की आकांक्षा नहीं है, न हम अपने पत्रों का 'सरकुलेशन' पाठकों की संख्या बढ़ी हुई चाहते हैं, न खून लगाय शहीदों में दाखिल होने की भाँति हम नाम चाहते हैं कि बड़े लिक्खाड़ों में हमारी गिनती हो...न हमसे खुशामद चुनाचुनी और मिथ्या प्रशंसा की जाती है तब कोरी कलम की कारीगरी से कौन रीझें।"[4]

राष्ट्रीय एकता, सांप्रदायिक सद्भाव तथा साहित्य-भाषा आदि उच्चादर्शों के लिए निस्वार्थ भाव से जूझना इनका आदर्श-बिन्दु हैं।[5]

8. प्रसार संख्या—विवेच्य काल के अधिकांश पत्रों की प्रसार-संख्या अधिक नहीं थी। फिर भी इनका भारतीय जनमत और सरकार पर व्यापक प्रभाव पड़ा था।[6] क्योंकि

---

1. उचितवक्ता, 7 अगस्त, 1880
2. ब्राह्मण, 15 मई, 1883, पृ० 30
3. हरिश्चन्द्र चन्द्रिका, दिसंबर 1884 (वर्ष 11 अंक 3)
4. हिन्दी प्रदीप, सितंबर, 1895
5. उदारचरिता नान्तु वसुधैव कुटुम्बकम् इस कारण हम सब आर्य्यों को यही चाहिये कि सबसे परस्पर प्रेम रखें। बराबर एकता बढ़ाते जाएँ—अपने पुराने बादशाही समय के बैर भाव को भूल जाएँ"—भारत जीवन, 3 मार्च, 1884, पृ० 2
6. "सरकार विशेषरूप से इन पत्रों के प्रभाव से डरती थी इनकी वास्तविक ग्राहक संख्या अधिक न थी, पर यह उनके प्रभाव का मापदण्ड नहीं था क्योंकि एक प्रति को बहुत से पाठक पढ़ते थे।"—डा० ताराचन्द, भारतीय स्वातन्त्र्य आन्दोलन का इतिहास, पृ० 399

"यदि किसी पत्र की एक भी प्रति किसी गाँव में या ग्राम-समूह में पहुंचती है तो इसमें जो कुछ छपा है, वह तुरन्त उस इलाके में रहने वाले सब लोगों में फैल जाएगा।"[1]

तत्कालीन पत्र परस्पर अपने पत्रों का आदान-प्रदान और आपसी सम्पर्क बनाए रखकर एक साथ मिलकर प्रत्येक महत्त्वपूर्ण राष्ट्रीय समस्या को उठाते तथा उसके पक्ष-विपक्ष में निरन्तर वाद-विवाद तथा चर्चा कर विचार-विमर्श करते, फलस्वरूप संगठित राष्ट्रीय जनमत का निर्माण स्वतः हो जाता था। 'जागरण' के साथ सभी देशी भाषाओं के राष्ट्रीय पत्रों की प्रसार-संख्या बढ़ती गई थी। 'नेटिव प्रेस रिपोर्ट' के गुप्त दस्तावेजों में प्रायः सभी पत्रों की प्रसार संख्या दी गई है। कुछ पत्रों की प्रसार संख्या 1885 ई० में इस प्रकार थी—

पत्र का नाम	रूप	स्थान	प्रसार-संख्या
अलमोड़ा अखबार	साप्ताहिक	अलमोड़ा	100
आनंद कादंबिनी	मासिक	मिर्जापुर	500
हिन्दुस्थान	दैनिक	कालाकांकर	173
भारतजीवन	साप्ताहिक	बनारस	2000
भारतबंधु	,,	अलीगढ़	175
हिन्दी प्रदीप	मासिक	इलाहाबाद	200
प्रयाग समाचार	साप्ताहिक	,,	450
कविवचन सुधा	,,	काशी	500

हिन्दी के 'कविवचन सुधा', 'हिन्दी प्रदीप', 'हिन्दुस्थान' आदि सैकड़ों पत्रों की प्रसार-संख्या अत्यल्प होने पर भी ये महत्त्व और प्रभाव की दृष्टि से अग्रणी रहे और अधिसंख्य जनता को एकता के दृढ़ बंधनों में बाँध राष्ट्रीय चेतना का प्रसार करते रहे।

9. मूल्य—भारतेन्दु युग की अधिकांश पत्र-पत्रिकाओं का मूल्य तत्कालीन मूल्य-मानों को देखते हुए अधिक प्रतीत होता है इसका मुख्य कारण राजकीय सहायता का अभाव, मुद्रण-व्यय का अधिक तथा विज्ञापन-आय का अत्यल्प होना, व्यावसायिक वृत्ति का अभाव तथा ग्राहकों की न्यूनता आदि थी। प्रायः साप्ताहिक पत्रिकाओं का मूल्य 'कविवचन सुधा' की देखा-देखी लगभग 6/- वार्षिक रखा जाता था। 'सदादर्श' साप्ताहिक का मूल्य केवल 2।।) रुपये था तब भी यह साप्ताहिक पत्रिका दो वर्ष भी पूरे न कर सकी, 'कविवचन सुधा' में जाकर मिल गई। 'हिन्दी दीप्ति प्रकाश' का मूल्य केवल 1।।) वार्षिक था तथापि इसके संपादक कार्तिक प्रसाद खत्री को घर-घर घूमकर ग्राहक बनाने पड़ते थे। अधिकांश पत्र अल्पजीवी रहे इसका कारण जनता की अकृतज्ञता नहीं थी बल्कि तत्कालीन गरीबी, अशिक्षा, अभिरूचि के अभाव तथा अंग्रेजी-उर्दू को बढ़ावा, हिन्दी शिक्षा, पत्रकारिता तथा भाषा-सम्बन्धी उपेक्षित नीति के कारण हिन्दी पाठक वर्ग तेजी से नहीं बढ़ पा रहा था। कुछ प्रमुख पत्र-पत्रिकाओं के मूल्य इस प्रकार थे—

1. रॉपर लेथब्रिज, पुन उद्धृत डा० ताराचन्द, उपरिवत् पृ० 403

मित्रविलास ४ अक्तूबर सन १८८० आश्विन वदि १० संवत १९३७ ५५

विज्ञापन

बिहार-बन्धु

(डेमी फ़ालियो ८ पृष्ठ)

इस साप्ताहिक समाचार पत्र के विषय में "कमखर्च बालानशीन" की मसल बहुत ठीक घटती है। बढ़िया कागज़ पर खूब सफ़ाई के साथ छपकर ठीक समय पर निकलता; रिउटर, प्रेस कमिश्नर, आदि की भेजी हुई, और दूसरी तुरन्त की टटकी और गरम खबरें, और कारस्पाण्डेण्टों की नोक झोंक वाली बातों, और चुटकुलों का छपना आदि के सिवाय-इस समाचार पत्र की इन दो बातों के लिये विशेष कर बड़ी बड़ाई की जाती है। एक तो यह कि इसमें बड़ी ढिठाई के साथ पोलिटिकल अर्थात राजनैतिक विषय हर बार छपा करते हैं; और दूसरी बात यह है कि भाषा इसकी इतनी सीधी है कि मानो रोजमर्रे की बोलचाल, और मनोहर इतनी कि जो पढ़ते हैं मधुर भाषी मित्र से बातचीत करने का मज़ा उठाते हैं।

वार्षिक मूल्य, अग्रिम डाक महसूल समेत कुल ८) रु० पता "बिहारबन्धु" छापाखाना, बांकीपुर, पटना।

एक जोड़ अंगूठी

नाम अनूठा किस्सा, जो "बिहारबन्धु" में सार: एक बार छप गया है, फिर छपकर पुस्तक के आकार में तय्यार हो गया है। जिन साहिबों को मंगाना हो "बिहारबन्धु" छापाखाना बांकीपुर से मंगाले।

कीमत फी जेलद आठ आने

डाक महसूल [illegible] दो आने

सज्जाद-सम्बुल

(नाटक)

यह नये ढंग का किस्सा नागरी हर्फ़ और उर्दू बोलचाल में छपा है। इसमें जगह बंगाली, अंग्रेजी और देहाती लोगों की गंवारी बोलचाल भी है। बहुतेरी जगहों में ऐसा लिखा गया है कि जिसके पढ़ने से पढ़ने वाला कैसा ही उदास क्यों न हो ज़रूर ही हंस पड़ेगा। और बाज़े जगहों में ऐसे बयान हैं कि उनके पढ़ने से संगदिल से संगदिल की आंखें भी डबडबा आती हैं। मजाल नहीं कि वे दो एक बूंद आंसू टपकाये आगे बढ़ जायें। दाम सिर्फ ५) रु० डाक महसूल =) मनेजर, बिहारबन्धु, छापाखाना, बांकीपुर।

पाजी-पिता

पहला हिस्सा

अच्छे सुंदर नागरी हर्फ़ों में छपकर तैयार है। इसमें बातचीत के तौर पर हमल रहने के वक्त से लेकर लड़का हो जाने तक औरत लड़कों की बीमारियों का हाल, और उनकी दवायें बहुत साफ़ साफ़ और सीधी ज़बान में लिखी हैं।

पत्र का नाम	रूप	मूल्य वार्षिक डाक व्यय सहित
भारत जीवन	साप्ताहिक	1।।)
सारसुधानिधि	,,	6।।)
भारत मित्र	,,	2।।)
उचित वक्ता	,,	3)
हिन्दी प्रदीप	मासिक	1।।)
ब्राह्मण	,,	1।।)
समय विनोद	पाक्षिक	6।।।)
पियूष प्रवाह	,,	2)
हरिश्चन्द्र चन्द्रिका (36 पृष्ठों में)	मासिक	6)
भारतोदय	दैनिक	10)

प्राय: पत्र-पत्रिका द्वारा सरकार, रईसों तथा पीछे देने वाले ग्राहकों से अधिक मूल्य लिया जाता था।[1]

10. कठिनाइयाँ—तत्कालीन पत्र और पत्रकारों को कदम-कदम पर भयंकर बाधाओं से जूझना पड़ा था। पहली कठिनाई तो हर पत्र के सामने आर्थिक ही थी। प्रायः सभी हिन्दी पत्र ग्राहकों की न्यूनता तथा पत्रकारों की साधनहीनता के कारण घाटे में चलते थे। उस युग के नवजात वर्गों जमींदार, भूस्वामी, श्रमिक, काश्तकार, महाजन, उद्योगपतियों तथा बुद्धिजीवी मध्यम वर्ग में केवल अन्तिम शिक्षित मध्यम वर्ग ही हिन्दी पत्रों का उपभोक्ता था। समाज के अधिकांश वर्गों से पत्रकारिता को कोई प्रोत्साहन नहीं मिल सका था। डा० रामविलास शर्मा के शब्दों में "सेठ लोग आज से भी अधिक भाषा और साहित्य के प्रति उदासीन थे—सरकार के प्रेस एक्ट आदि का भय अलग था।[2]

ग्राहकों की न्यूनता तो थी ही, जो थोड़े बहुत ग्राहक थे वे भी संपादक को पैसा न भेजते। कुछ विलंब से चुकाते। प्राय: सभी पत्रों ने परेशान होकर ग्राहकों से प्रार्थना, विनय, धमकी आदि दी थी। 'उचित वक्ता' के संपादकीय लेख "कौन कहता है कि भारत-वासियों में एका नहीं है" में खीझ कर कहा था "पाठकों। शायद आपको लोगों को इस बात का अनुभव न हो—परन्तु हिन्दी पत्रों के (केवल हिन्दी पत्रों के नहीं वरन् देशीय

1. 'हिन्दी प्रदीप' की जौलाई-अगस्त 1889 में मूल्य सम्बन्धी विज्ञप्ति इस प्रकार की सभाएँ, पुस्तकालय, विद्यार्थियों तथा असमर्थों से अग्रिम 1।। ≡) वार्षिक समर्थों से 3) पीछे देने से 4) पिछले अंकों की पूरी जिल्द-की-जिल्द पोस्टेज 3) इसके प्रथम अंक में "मेरा मूल्य भी इतना रखा गया है जिससे लागत निकल आवे।" वही, सितंबर 1877
2. डा० रामविलास शर्मा, भारतेन्दु युग

समस्त भाषा के) संपादक तो इस बात को खूब अच्छी रीति से जानते हैं। वे लोग मुक्त कंठ से स्वीकार कर लेंगे कि संवाद-पत्रों के दाम न देने में भारतवासियों का ऐसा एका है कि दूसरे-दूसरे देशों में ढूँढ़ने पर न मिले।"[1]

भारतेन्दु के पत्रों की सरकारी 100 प्रतियों की खरीद बन्द होते ही उनकी रुक-रुककर सांस चलने लगी थी। उन्हें विवश होकर उन्हें दूसरों को सौंपना पड़ा या बन्द कर देना पड़ा था।

कभी-कभी पत्रिका के संचालक का आक्रोश, विवशता तथा क्षोभ बाँध तोड़कर फूट पड़ता। 'हमने' जो गत मास सूचना दिया था उस पर किसी महाशय ने ध्यान नहीं दिया। राजा की आँख में हम चढ़े ही हैं, प्रजा का यह हाल है कि कोई हमारी सहायता की ओर कुछ ध्यान नहीं देता। इस साल बिल्कुल घाटा ही घाटा दिखाई देता है।"[2]

कभी संपादक क्रोध में आकर अंतिम 'चिनौती' और धमकी देते "हम उन्हें खूब चिता देते हैं कि महीने के अन्दर ही जहाँ तक हो सके झटपट रुपये भेजें। नहीं तो 'हिन्दी प्रदीप' ने नादिहन्दों की जो दशा की थी उसी का स्मरण करें उनके नाम पतेवार नादिहन्दों में छापे जाएँगे।"[3]

वस्तुतः जनता की क्रय शक्ति का ह्रास तेजी से हो रहा था। अतः गिरते आर्थिक स्तर, बढ़ते अंग्रेजी भाषा के प्रभाव हिन्दी में लेखकों-पाठकों की न्यूनता तथा वर्नावियूलर प्रेस एक्ट 1878 आदि के दमन ने भारतीय भाषाओं के पत्रों की उन्मुक्त गति और शक्ति को कुंठित कर दिया था।

किन्तु हिन्दी पत्रकारिता घाटा उठाकर भी हिन्दी-हिन्दुस्तान के हितों के लिए प्रतिबद्ध थी। उस समय के पत्रों की दयनीय असहाय स्थिति का वर्णन 'ब्राह्मण' संपादक प्रताप नारायण मिश्र ने इन शब्दों में किया है—"चार वर्षों से हम देख रहे हैं कि देशी समाचार पत्रों में विशेषकर हिन्दी पत्रों में जो कुछ लाभ होता है, बेचारे संपादकों का जी ही जानता है। 'मासिक पंच', 'भारतेन्दु', 'उचितवक्ता' आदि उत्तमोत्तम पत्र इसी घाटे की छूत के मारे थोड़े ही दिनों में चलकर बन्द हो गए।"[4]

ऐसी विषम परिस्थितियों में भी हिन्दी पत्रिकाओं का निरंतर प्रकाशित होना उनकी अदम्य जिजीविषा, उत्कट लगन और जागरूकता को प्रकट करता है। वस्तुतः "उस समय संचालकों की अक्षमता उतनी न थी जितनी परिस्थितियों की कठोरता थी।'[5] महावीर प्रसाद द्विवेदी ने ठीक ही कहा था "हिन्दी की दशा कुछ ऐसी बुरी है अच्छे पत्र को भी बहुत कम लोग पढ़ते हैं।"[6] हिन्दी प्रदीप' के संपादक ने व्यथित मन से लिखा था "हमारा

1. उचित वक्ता, 13 जनवरी, 1883
2. हिन्दी प्रदीप, मार्च, 1879
3. पियूष प्रवाह, 23 मई, 1884, पृ० 12
4. सं० धनञ्जय भट्ट 'सरल', हिन्दी की दशा और पत्रकारिता, पृ० 8-9
5. डा० रामविलास शर्मा, भारतेन्दु युग, पृ० 27-28
6. सरस्वती, अगस्त, 1906, पृ० 306

कलेवर हिन्दी भाषा और देवनागरी अक्षरों में न होता तो यह कहना और हौसला रखना किसी तरह का बड़ा बोल और पाप न समझा जाता कि हमारे भी हजार-दो हजार ग्राहक हों किन्तु सब ओर से निराश हिन्दी जब इस लायक नहीं—हमें केवल उतने ही पढ़ने वाले बहुत हैं जो रुचि और प्रेम के साथ हमें आदर दें।"[1]

11. साज-सज्जा एवं प्रस्तुतिकरण—जागरण काल में हिन्दी पत्रकारिता में अशुद्धि रहित निर्दोष मुद्रण, आकर्षक सुरुचिपूर्ण प्रस्तुतिकरण रंगीन साज-सज्जा तथा नयनाभिराम अलंकरण का यथेष्ट विकास नहीं हो पाया था। इसका मुख्य कारण संचालकों का धनाभाव, मुद्रणालयों की जर्जर स्थिति, पत्रों का अल्प-वितरण, पत्र-कला की अविकसित तकनीक तथा सोद्देश्य पूर्ण राष्ट्रीय दृष्टिकोण का होना था। सीधे-सादे रूप में आकर्षक शीर्षक और रोचक वैविध्यपूर्ण सामग्री देकर पाठकों को रिझाने की चेष्टा की जाती थी। कुछ ही पत्रिकाएँ 'हरिश्चन्द्र चन्द्रिका', 'क्षत्रिय पत्रिका', 'उचितवक्ता' आदि ही मनोहर साज-सज्जा, साफ-सुथरे मुद्रण, कागज तथा आकार के साथ प्रकाशित हुई थीं। अधिकांश पत्रों का मुद्रण अशुद्धिपूर्ण एवं अस्पष्ट था। छपाई भी आकर्षक और स्तरीय नहीं कही जा सकती जिसका मुख्य कारण अर्थाभाव था।

वस्तुत: पत्र-पत्रिकाएँ उस समम केवल विलास या शुद्ध मनोरंजन का साधन नहीं थीं। वे पाठकों के हित, समाज सुधार, जन-जागृति वाली ज्ञानवर्द्धक सामग्री को सर्वोपरि महत्त्व देती थी। वे विदेशी परतन्त्रता के विरुद्ध विद्रोह और स्वाधीनता की मशाल जलाने वाली अग्रदूत थीं तथा स्वदेश परक दृष्टिकोण एवं राष्ट्रीय जन-जागरण का माध्यम थीं। वे व्यवसाय, विज्ञापन और बाह्य आकर्षक साज-सज्जा से असंपृक्त थी तथा पत्रकार के समर्पण पूर्ण दायित्व की द्योतक थीं।

उनकी छपाई पुराने ढंग से दो या तीन कालमों में की जाती थी। अर्थाभाव के कारण वे संयुक्तांक निकालने को विवश होतीं जिससे पोस्टेज का खर्चा बचाया जा सके। साधारणतया पृष्ठों की संख्या 10-36 पृष्ठों तक होती थीं।

मुख-पृष्ठ—किसी पत्र-पत्रिका का मुख-पृष्ठ देखकर ही उसके स्तर, मूलस्वर, उद्देश्य एवं स्वरूप के सम्बन्ध में निश्चित अवधारणा बनाई जा सकती है। आकर्षक मुख पृष्ठ किसी पत्रिका को खरीदने और पढ़ने को बरबस प्रेरित करता है। सामान्यत: विवेच्य-कालीन हिन्दी पत्र-पत्रिकाओं के मुख-पृष्ठों पर पत्रिका का नाम, तिथि, मास, मूल्य तथा मूलस्वर को अभिव्यक्त करने वाला सिद्धान्त वाक्य, विषय-सूत्री, अंक-संख्या, जिल्द, प्रकाशन-स्थान आदि अंकित रहते थे। किसी-किसी पत्र में प्रेस का नाम, स्थान व मुद्रक का नाम भी मुद्रित रहता था। इस युग के पत्र-पत्रिकाओं के मुख-पृष्ठ का अनुमान प्रस्तुत शोध प्रबन्ध में दी गई कुछ पत्रों के मुख-पृष्ठों की फोटो-प्रतिलिपियों से लगाया जा सकता है।

शीर्षक—पत्र-पत्रिकाओं में पैने, चटपटे, सार्थक तथा सटीक शीर्षक देना भी एक

1. हिन्दी प्रदीप, सितंबर 1893, पृ० 1-2

कला है। वही शीर्षक उत्तम माने जाते हैं जो पाठकों के मूल भावों का स्पर्श और झंकृत कर उन्हें रचना या समाचार पढ़ने को विवश कर दें। आर्थर क्रिश्चयन के अनुसार, "अच्छा शीर्षक मुहावरेदार, बोलचाल की सशक्त भाषा में लिखा होता है। उसमें सूझ-बूझ, सतर्कता, प्राणवत्ता, तथा संक्षिप्तता होती है।"[1]

विवेच्यकाल की हिन्दी पत्र-पत्रिकाओं के अग्रलेखों, समाचारों, कविता, प्रहसनों, लेखों आदि के शीर्षक मुहावरों, संस्कृतश्लोकों, अंग्रेजी वाक्यों, हिन्दी कविता आदि में मनोरम ढंग से दिए जाते थे जिनका पैनापन, व्यंग्य, सजीवता एवं सटीक प्रभाव पाठकों में अपेक्षित अभिरुचि जागृत करके उन्हें पढ़ने को बाध्य करता है। कुछ शीर्षक इस प्रकार थे।

मुहावरों और लोकोक्तियों में शीर्षक

'जले पर नोन', 'शोक पर शोक' (पियूष प्रवाह 25 जनवरी, 1885) 'तीन दबावत निबल को पातक, राजा, रोग' (ब्राह्मण, 1883, खंड 1 अंक 10) 'आधा तीतर आधा बटेर', 'घर के न घाट के' (हिन्दी-प्रदीप, फरवरी-मार्च 1883) 'पाँच पीर संग चले' (भारत मित्र 19 सितंबर, 1878) आदि शीर्षक सार्थक अभिव्यक्ति देते हैं।

संस्कृत वाक्यों में शीर्षक—'अतिसर्वत्र वर्जयेत्' (पियूष प्रवाह, 25 मार्च 1885) 'दरिद्रदोषों गुणराशिनाशी' (सारसुधानिधि, 7 अप्रैल 1879) 'मूलन्नास्ति कुतः शाखा', (ब्राह्मण, खण्ड 6 संख्या 5) 'सर्वत्यक्लवा हरिभजेत्' (हिन्दी प्रदीप, मई 1878) 'अहिंसा परमोधर्मः यतो धर्मस्ततोजयः' (भारतमित्र, 15 जुलाई 1878)

हिन्दी कविता में शीर्षक—

"सबै सहायक सबल के, कोऊ न निबल सहाय।
पवन जगावत अगिन को, दीपहि देत बुझाय।।"
(ब्राह्मण-1884 खंड 2 अंक 4)

अंग्रेजी शब्दों में शीर्षक—"लोकल सेल्फ गवर्नमेंट" (हिन्दी प्रदीप मई 1882) 'पब्लिक ओपिनियन' (हरिश्चन्द्र मैगजीन 15 अप्रैल 1874) 'ज्यूरिस-डिक्शन बिल' (ब्राह्मण 1882, अंक 2) 'इम्पीरियल लाइसेंस टेक्स' (सारसुधानिधि 16 जून 1879 ई०)

कुछ पत्रिकाओं के शीर्षक सीधे-सादे होते थे जबकि कुछ के चुस्त, संतुलित एवं मार्मिक थे जो सुनिर्दिष्ट चिंतन को ध्वनित करते हैं। कुछ व्यंग्यात्मक रोचक शीर्षक भी मिलते हैं। 'काले रंग की फजीहत', 'ईश्वर भी क्या ठठोल है'—हिन्दी प्रदीप। 'कानपुर कुछ कुनमुनाया है', 'सुनिए तो', 'क्षमा कीजिए'—ब्राह्मण। 'बस देखी गई', उल्लू बंसत', 'जी हजूर'—'पियूष प्रवाह', 'लो नाटक का भी फाटक बन्द हुआ'—समय विनोद।

1. पुनउर्द्धत सं० वेदप्रताप वैदिक, हिन्दी पत्रकारिता : विविध आयाम, पृ० 465-466

समस्त कटाक्ष करते धारदार शीर्षक युग की जागृति और नवचेतना को ध्वनित करते हैं। वे संक्रमणकालीन संस्कृति, आधुनिकता और युगीन प्रतिक्रिया का गहरा अहसास दिलाते हैं।

12. **नीति वाक्य**—जागरण कालीन पत्र-पत्रिकाओं के नीतिवाक्य (मोटो) गुरु गम्भीर, सप्राण, उद्देश्यपरक आदर्शों और आवेगों के अनुरूप होते थे। कुछ जीवंत, ओज़पूर्ण मोटो द्रष्टव्य हैं—

"जयोऽस्तु सत्य निष्ठानां येषां सर्वे मनोरथा:"—भारत मित्र

"अयं निज: परोवेति गणना लघुचेतसाम्,
उदार चरितान्तु वसुधैव कुटुम्बकम्:—भारत जीवन

"हितं मनोहारि च दुर्लभं वच:"—उचितवक्ता

"अर्जुनस्य प्रतिज्ञै द्वै न दैन्यं न पलायनम्—पियूषप्रवाह

"शत्रोरपि गुणा बाध्या दोषा वाष्पा गुरोरपि"—ब्राह्मण

उपर्युक्त कुछ नीति-वाक्यों से ही तत्कालीन पत्र-पत्रिकाओं की उत्कर्ष चेतना, लोकहित के प्रति सजगता, दृढ़ता, विद्वता और ओजस्विता का अनुमान लगाया जा सकता है। ये मोटो सनसनीदार आधुनिक पत्रकारिता के विपरीत सोद्देश्य प्रौढ़ चिंतन के प्रतीक हैं जो युगीन नवजागरण और पत्रकारिता के आदर्शों को प्रतिबिम्बित करते हैं।

13. **प्रमुख स्तंभ**—भारतेन्दु युगीन मासिक, साप्ताहिक, दैनिक आदि पत्र-पत्रिकाओं के प्रमुख स्तंभ कुछ इस प्रकार रहते थे :

1. सम्पादकीय अग्रलेख एवं टिप्पणियाँ।
2. विविध साहित्यिक विधाएँ—नाटक, उपन्यास आदि।
3. व्यंग्य-विनोद प्रधान सामग्री।
4. व्यावहारिक ज्ञान—उदाहरणार्थ सांप काटने, लू से बचने का उपाय, वारनिश करने का उपाय आदि।
5. समाचारावली।
6. विज्ञापन, धन्यवाद, शोकसंवेदना आदि।
7. लेख एवं टिप्पणियाँ।
8. पुस्तक-पत्र आदि की समीक्षा।
9. शतरंज आदि खेलों की चालें।

पत्र-पत्रिकाओं में तब महिलाओं, बालकों आदि के लिए अलग से कोई स्तंभ नहीं होता था। व्यंग्य-चित्र आदि का भी अभाव था।

सामग्री चयन—दैनिक समाचार पत्रों में जहाँ सम्पादकीय पृष्ठ पत्र की आत्मा होता है वहीं मासिक, साप्ताहिक तथा पाक्षिक आदि पत्रिकाओं में निश्चित लम्बी अवधि की नियतकालिकता और उद्देश्यपरकता के कारण समाचारों की अपेक्षा विचार-लेखों तथा विविध साहित्यिक विधाओं की प्रधानता दी जाती है। वस्तुत: तत्कालीन पत्र-पत्रिकाओं में समसामयिक, स्थायी एवं शोधपरक सामग्री का समुचित सम्मिश्रण रहता

था। पाक्षिक-मासिक तथा साप्ताहिक पत्रों की सामग्री दैनिक की अपेक्षा अधिक सरस, गम्भीर एवं स्थायी महत्त्व की थी। इनके लेख सदैव अजर-अमर, चिर यौवन सम्पन्न और जब पढ़ो तब नये जान पड़ते हैं।[1]

हिन्दी पत्र-पत्रिकाओं में हल्की-फुलकी मनोरजक सामग्री के साथ उच्चस्तरीय शाश्वत साहित्यिक विधाओं का भी चयन किया गया था। सामग्री-चयन की दृष्टि से पत्रकारिता की सामग्री साहित्य-राजनीति एवं सामाजिक-सुधार-सम्बन्धी विषय सामग्री और उद्भावनाओं से समन्वित थी तथा वे जीवंत सोद्देश्यपूर्ण राष्ट्रीय पत्रकारिता का आदर्श उदाहरण प्रस्तुत करती हैं।

पत्रकारिता जनजीवन से जुड़ी होने के कारण राजनीति और साहित्य को परस्पर पूरक मान कर उनको समान महत्त्व देती थी। हरिश्चन्द्र मैगजीन (15 नवम्बर 1877) विषय-सूची से विदग्ध, प्रौढ़ साहित्यिक स्तर, विषय— वैविध्य एवं राजनीतिक प्रतिबद्धता का अनुमान लगाया जा सकता है—

हरिश्चन्द्र चन्द्रिका (15 नवम्बर 1877)

विषय सूची—अथ श्री राधा सुधा शत के लिख्यते पृष्ठ 25 शाण्डिल्य शत सूची भाषा-भाष्य सहित 30 प्रान्तर-दर्शन 32 कवित्त-35 सर्बजात गोपाल की 35 चीनी साहित्य 36 शरदऋतु वर्णन 37 कलिराज की सभा 38 काशी 39 नागमंगलो का दान-पत्र 39 भक्ति ज्ञानादिक से क्यों बड़ी है ? 42 Scope for the Éducated Indian 44 भ्रमराष्ट्रकम् 46 कादम्बरी 47 श्रीयुत् कविवचन सुधा सम्पादक समीपेषु (पत्र) 50 कीर्तिकेतु नाटक 52 मार्टिन वाल्डेक के भाग्य 56 पुरावृत्त-संग्रह 59 मैत्री 63 समस्या 65 Allahabed Veritas 66 Social Reformation (R.N.P.) 70 From Punch-musalman Patform 71, Historical Correspondance 72

14. **रूप**— हिन्दी पत्र-पत्रिकाओं का स्वरूप दैनिक, साप्ताहिक, मासिक, तथा शोध पत्रों का मिश्रित रूप था। वस्तुत: उन्नीसवीं शताब्दी के हिन्दी दैनिक समाचार पत्र एवं पत्रिकाओं के उद्देश्यों, रूप-सज्जा एवं विषय सामग्री में कोई मूलभूत अन्तर नहीं था क्योंकि दैनिक पत्रों की संख्या बहुत कम थी। साप्ताहिक—मासिक में भी दैनिक के समान समाचार संग्रह रहता था। आधुनिक पत्र-पत्रिकाओं के समान उनके कार्यक्षेत्र, योजना, कर्तव्य एवं अभिव्यंजना भिन्न नहीं थी।

15. **लेखक**—हिन्दी पत्र-पत्रिकाओं में सैकड़ों जाने-माने भारतेन्दुयुगीन तथा द्विवेदीयुगीन साहित्यकारों—भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, प्रतापनारायण मिश्र, 'प्रेमघन', लज्जाराम मेहता, पं० अंबिकादत्त व्यास, माधव प्रसाद मिश्र, बालमुकुंद गुप्त, राधाचरण गोस्वामी, बालकृष्ण भट्ट, लाला निवासदास, बाबू देवकीनंदन खत्री, बाबू तोता राम, गोपालराम गहमरी, महावीर प्रसाद द्विवेदी, देवकीनन्दन खत्री, कार्तिक प्रसाद,

1. सरस्वती, नवम्बर 1958, पृष्ठ 417

श्यामसुन्दर दास खत्री आदि की हजारों की संख्या में लिखी रचनात्मक एवं ज्ञानात्मक सामग्री मिलती है। नवोदित एवं प्रसिद्ध पत्रकार-लेखकों में दुर्गाप्रसाद मिश्र, लाला सीताराम, गोविंद नारायण मिश्र, परसन, पं० मोहनलाल पंड्या, केशवराम भट्ट, पं० सकल नारायण पांडेय, सदानंद मिश्र, सदानंद सनवाल, पं० लक्ष्मीशंकर मिश्र, नवीन चन्द्रराय, पं० बलदेव प्रसाद मिश्र, स्वामी श्रद्धानन्द, पं० रामशंकर व्यास, पं० शिव-नारायण अग्निहोत्री, बाबू ठाकुर प्रसाद खत्री, अमृत लाल चक्रवर्ती, पं० रघुवीर प्रसाद द्विवेदी, मनीषि समर्थदान आदि ने प्राय: विविध विषयों पर कलम चला कर जीवंत पत्र-कारिता सामग्री दी थी।

इस काल में अधिकतर लेख गुमनाम या अधूरे संक्षिप्त नामों से ही मिलते हैं उदाहरणार्थ क० प०, एक्स० वाइ० जैड, एक आर्य बंधु आदि। इसी कारण सभी लेखकों के नाम स्पष्ट नहीं हो पाते। द्विवेदीयुगीन अधिकांश साहित्यकार-पत्रकारों की रचनाएँ इस काल की पत्र-पत्रिकाओं में बहुतायत से मिलती हैं। अधिकांश पत्रिकाओं के लेखक पत्र-पत्रिकाओं के संपादक तथा भारतेन्दुयुगीन साहित्य के सर्जक थे लेकिन कुछ नवोदित ऐसे लेखक भी थे जिनके प्रेरणा स्रोत भारतेन्दु, बालकृष्ण भट्ट, प्रताप नारायण मिश्र आदि साहित्यकार थे।

16. **विज्ञापन**—विज्ञापन, मुद्रण और पत्रकारिता प्रारम्भ से ही घुले-मिले रहे हैं। औद्योगीकरण के विस्तार ने विज्ञापन को विकसित किया।[1] विज्ञापन पत्रकारिता का प्रमुख आय स्रोत तथा अंग होता है जिसकी उपेक्षा कोई भी पत्र-पत्रिका नहीं कर सकती। विवेच्य पत्र-पत्रिकाओं में जहाँ पौष्टिक दवाओं, पुस्तकों, पत्रों, साबुन, अर्क, खिचाव आदि उपभोक्ता सामग्री के विज्ञापन प्रकाशित होते थे, वहीं तत्कालीन प्रकाशित शिक्षाप्रद पुस्तकों के विज्ञापन भी बहुत बड़ी संख्या में प्रकाशित होते थे।[2] इन विज्ञापनों के माध्यम से तत्कालीन जागृत होती शैक्षिक तथा सामाजिक चेतना दिग्दर्शित हो जाती है। आधुनिक समीक्षा का बीज-चयन भी इन्हीं पत्र-पुस्तकों में की गई विज्ञापन-समीक्षा से हुआ था।

यद्यपि तब भी पत्र-संचालकों के लिए विज्ञापन आकर्षण की वस्तु थे किन्तु विज्ञा-पित वस्तु या पुस्तक आदि के जनहितकारक या अश्लील होने पर उस पर तीखा निर्मम प्रहार किया जाता था। तब विज्ञापन से होने वाली आय को लोकहित के समक्ष ये पत्रि-काएँ तनिक भी महत्त्व नहीं देती थीं उदाहरणार्थ 'मंजरी' नाम की पुस्तक का विज्ञापन इस तथ्य की पुष्टि करता है।[3]

---

1. एडविन एमरी : द प्रेस एण्ड अमेरिका, पृष्ठ 8
2. देखिए मित्रविलास (साप्ताहिक 4 अक्टूबर 1880) की प्रतिलिपि में दिये 'विज्ञापन'
3. हिन्दी प्रदीप जून 1906, पृ० 19

3.2 हिन्दी पत्रकारिता : संपादकीय सामग्री

3.2 संपादकीय-सामग्री

3.2.1 **संपादन-कला एवं दायित्व**—'संपादन' शब्द का व्युत्पत्तिपरक अर्थ (सम+णिच+ल्युट) प्रस्तुत करना, पुस्तक या सामयिक पत्र आदि का क्रमपाठ ठीक करके उसे संकलित करना है। (एडिटिंग)।[1] 'प्रेस एण्ड रजिस्ट्रेशन आव बुक्स एक्ट' (1867) के अनुसार 'समाचारपत्र में जो कुछ भी प्रकाशित होता है, उसका चयन एवं नियंत्रण करने वाला व्यक्ति संपादक कहलाता है।[2] सम्पादक का दायित्व समाचार सम्पादन के साथ प्रबंधकर्त्ता का भी होता है।[3]

पत्रकारिता में सम्पादक का कार्य सर्वाधिक दायित्वपूर्ण और जोखिम भरा होता है।[4] सम्पादन-कला का आदर्श यही है कि वह लोक-हित की सामग्री को सर्वोपरि महत्व दे और निस्पृह अग्रलेखों द्वारा जन-जीवन को जागृत एवं गतिशील बनाये। 'सम्पादक की इतिकर्त्तव्यता' लेख में 'हिंन्दी प्रदीप' के कर्त्तव्यनिष्ठ सम्पादक बालकृष्ण भट्ट ने 'सम्पादकीय दायित्व' पर विचार किया था, "शासन की प्रभु शक्ति में सम्पादकों की तृतीय श्रेणी (Third power) है जो योग्यतापूर्वक सम्पादक का काम निबाहा जाय तो बड़ा नाजुक काम भी है इसमें बड़ी गम्भीरता पल्ले सिरे की योग्यता और युक्त-अयुक्त का विचार होना बड़ा आवश्यक है। स्वार्थ-त्याग और समभाव की भी जरूरत है—'न्यायात्पथ प्रविचलन्ति पदं न धीरा' इसका पूरा उपयोग सम्पादक के काम में ही देखा जाता है।"[5]

19वीं शती के ही जातीय-पत्र 'क्षत्रिय पत्रिका' ने भी सम्पादक की महत्ता और दायित्व पर समुचित प्रकाश डाला था—"सम्पादक अपने देश, राजा और साधारण का प्रतिनिधि है, इसलिए राजा को चाहिए कि उसका मान अच्छी तरह से करे और सम्पादक का भी यही काम है कि यथार्थ और सत्य-सत्य परामर्श राजा को देवे और ऐसा करने से देशोन्नति भली-भाँति हो सकती है। जो काम दस-बीस हजार रुपये पाने वाले मंत्री से चल सकता है वह काम योग्य सम्पादक से होता है।"[6]

---

1. संस्कृत शब्दार्थ कौस्तुभ (तृतीय संस्करण) 1967, पृ० 1232
2. डा० रामचन्द्र तिवारी, पत्रिका सम्पादन-कला, पृष्ठ 58
3. Journalism Some masters of craft (Lecture Fred. H. Champion Page 161.
4. 'सम्पादक का समाज पर गहरा प्रभाव पड़ता है—यदि पत्रों का लक्ष्य केवल धन कमाना नहीं है यदि उनका आदर्श जन-हित की रक्षा करना तथा साधारण मनुष्य का साथी, मित्र, उपदेष्टा तथा रक्षक होना है तो पथ-प्रदर्शक सम्पादक होने के नाते, उस विशाल जनसमूह के प्रति उत्तरदायी है'—कमलापति त्रिपाठी : पत्र और पत्रकार, पृ० 188-189
5. हिन्दी-प्रदीप, दिसम्बर, 1906
6. क्षत्रिय पत्रिका, 1881 प्रथम उपक्रम, पृ० 5-6

संक्षेपत: पत्र की नीति सुस्थिर करना, समयानुकूल तर्कपूर्ण सम्पादकीय सामग्री संशोधित करके प्रकाशित करना तथा जनसमूह के प्रति उत्तरदायी होना सम्पादक के प्रमुख कर्त्तव्य एवं दायित्व माने जा सकते हैं। 19वीं शती की जागरण-कालीन पत्र-पत्रिकाओं की सम्पादकीय-सामग्री में निम्नलिखित स्तंभ होते थे —

1. सम्पादकीय अग्रलेख एवं टिप्पणियाँ
2. व्यंग्य-विनोदात्मक स्तंभ
3. सम्पादक के नाम पाठकों के पत्र
4. पुस्तक-पत्र समीक्षा
5. अन्य लेख, उद्धरण, श्लोक-संवाद आदि

3.2.2 **सम्पादकीय अग्रलेख एवं टिप्पणियाँ**—सम्पादकीय अग्रलेख एवं टिप्पणियाँ पत्र-पत्रिकाओं के व्यक्तित्व, नीति एवं विचारों के द्योतक होते हैं। प्रबुद्ध पाठकों को क्रमबद्ध रूप में, पृष्ठभूमि सहित विश्लेषित एवं सुविचारित सामग्री प्रदान करते हैं। सामान्य पाठक जिन घटनाओं तथा तथ्य-गर्भित विचार-श्रृंखला को ठीक प्रकार से समझ नहीं पाता सम्पादक उन्हें स्पष्ट शैली और सरल मर्यादित शब्दों में प्रस्तुत कर बोधगम्य बनाता है। वह सम्पूर्ण घटना-चक्र के तीव्र-प्रवाह को जोड़कर पाठकों के मस्तिष्क में आद्योपांत चित्र साकार कर देता है।[1] सम्पादकीय अग्रलेख सामयिकता को महत्व देते हुए भी भविष्य की ओर संकेत करते हैं। सम्पादकीय सामग्री की उपयोगिता तथा दायित्व संक्राति युग में और भी अधिक बढ़ जाता है क्योंकि राष्ट्र की प्रशासनिक लचर नीतियाँ, सामाजिक अंर्तविरोध, आर्थिक-धार्मिक विषमताएँ जन-मानस के विचारों-भावों को उद्वेलित करने लगती हैं। उस समय सम्पादकीय अग्रलेख आदि जनमत का मार्ग प्रशस्त करके उन्हें दिशाहीन होने से बचाते हैं।

'जागरण युग' की हिन्दी पत्र-पत्रिकाओं के अग्रलेखों में राष्ट्रीय स्वर प्रखर है। उत्तर उन्नीसवीं शती के नवीन-पुरातन के संधि-युग में पत्रों के स्वतंत्र अग्रलेखों और बेबाक टिप्पणियों ने अज्ञानाधंकार में भटकते-टूटते पाठकों में ज्ञान का प्रखर प्रकाश एवं आत्मविश्वास उद्दीप्त किया था। विभिन्न समस्याओं पर कुछ प्रतिनिधि अग्रलेख द्रष्टव्य हैं :

2. **अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओं पर अग्रलेख**—19वीं शती विश्व और भारत की राजनीति में गहरी उथल-पुथल से पूर्ण सदी थी। हिन्दी के राष्ट्रवादी पत्रों ने विश्व के देशों जापान, चीन, रूस, आयरलैंड, अमेरिका आदि की वैज्ञानिक-राजनीतिक-आर्थिक गतिविधियों तथा अन्य देशों के साथ ब्रिटिश साम्राज्य के औपनिवेशिक सम्बन्धों पर सूक्ष्म-

---

1. "सम्पादक कठिन विषयों को भी जनता के समक्ष पानी में तैरती नौका बना देता है। सम्पादकीय लेखन की दृष्टि से वही सम्पादक सर्वाधिक सफल होता है जो स्पष्ट, सशक्त तथा प्रत्यक्ष सरल-सुबोध शैली अपनाता है। किसी तथ्य को तोड़-मरोड़ कर प्रस्तुत नहीं करता या गलत बात कहे बिना तर्क-संगत विचार प्रस्तुत करता है"—जार्ज० एफ० मोट, न्यू सर्वे आफ जर्नलिज्म, पृ० 259-60

बूझ से भरे पैने अग्रलेख प्रकाशित किये थे। इनमें प्राय: सभी आर्थिक-राजनीतिक मुद्दों तथा अन्तर्राष्ट्रीय मुद्दों आदि को सजगता के साथ उठाया गया था।

रूस के जार की साम्राज्यवादी विस्तार-नीति की भर्त्सना और रूमियों के साहस पर स्वतंत्र सम्पादकीय विचार-लेख 'हिन्दी प्रदीप' में प्रकाशित हुआ था, 'रूस-रूस की लड़ाई की सूरत बदलने से हमको दो बड़ी भारी बात मालूम हुईं। एक यह कि रूसी कैसे साहसी, सूरमां और उत्साही है। दूसरे यह कि रूसियों में कितना बल और बुद्धि है।ये ··· वीर साहसी मुसलमान यूरप के एक महाबली राजा का मुकाबला कर रहे हैं और अपनी लगातार विजय से लोगों को निश्चय करा दिया कि रूमी लोग खाने के लिए ऐसे सुगम ग्रास नहीं है वरन् एक ऐसी कड़ी हड्डी हैं जो गले से उतरते ही सब गले को फाड़ देगी"—[1]

'सार सुधानिधि' (सा०) राजनीति प्रधान पत्रिका में युद्धों की विभीषिका और आधुनिक सभ्यता का व्यंग्यपूर्ण रेखांकन किया गया है।[2]

राष्ट्रीय पहलुओं पर अग्रलेख—हिन्दी पत्र-पत्रिकाएं राष्ट्रीय प्रश्नों और महत्त्वपूर्ण समस्याओं के प्रति स्वदेशपरक, संतुलित दृष्टिकोण रखती थी। इनकी संपादकीय सामग्री राष्ट्रीय एकता, स्वदेशी, कर-दुर्भिक्ष तथा प्रशासनिक अन्याय सम्बन्धी अग्रलेखों से लबालब हैं। अपने युग, परिवेश और आवश्यकताओं के अनुकूल इनके बेधड़क अग्रलेखों में बौद्धिक विश्लेषण कितना सार्थक और उत्तेजनापूर्ण होता था इसका अनुमान कतिपय राष्ट्रीय अग्रलेखों से लगाया जा सकता है।

भव्य खर्चीले दरबारों (1877, 1880) का आयोजन करके लॉर्ड लिटन और लॉर्ड रिपन आदि ने जन-असंतोष को और अधिक भड़का दिया था क्योंकि उस समय भारत लगातार दुर्भिक्षों और आर्थिक विपत्तियों से घिरा हुआ था।[3] 'समय विनोद' ने 'दिल्ली दरबार' अग्रलेख में भव्य दरबारों की सार्थकता और असली मंतव्य को भाँप कर भारतीयों को आगाह किया था, "हमारे समझ में तो ऐसा आता है कि यह दरबार हमारे

1. हिन्दी प्रदीप, सितबर, 1877, पृ० 13-14
2. सार सुधानिधि, 3 मार्च, 1879, पृ० 86 (भाग 1, अंक 8) "गत पच्चीस बरस में सभ्य राजाओं की युद्ध-तृष्णा से कितना नुकसान हुआ है—सब समेत सतरे लाख, अड़तलीस हजार आदमी मारे गये। इन सब युद्धों में सब मिला के 2743000000 दो खर्ब, सात अरब और तितालिस करोड़ रुपये खर्च हुए—तिस पर भी युद्ध। युद्ध। —इधर काबुल। उधर जुलू। ये ही क्या सभ्यता स्वरूप है।"
3. "इन्होंने (लॉर्ड लिटन) भारतवर्ष में आकर ऐसा कोई काम नहीं किया कि जिसके द्वारा भारत प्रजा सुखी होती क्योंकि दक्षिण का दुर्भिक्ष इनके समय उपस्थित हुआ था परन्तु महामान्य ने प्रारम्भ ही में दिल्ली के महादरबार का ऐसा आडंबर किया कि उस कारण इस दुर्भिक्ष का बंदोबस्त ऐसा न हो सका कि प्रजा का जीवन बचता।"--सारसुधानिधि 29 दिसंबर 1879, पृ० 578

देश के निर्बुद्धि राजा-महाराजाओं को फुसलाने के लिए किया गया था। इस प्रकार तो हम लोग भी अपने लड़कों को भाँति-भाँति का खिलौना देकर फुसला सकते हैं।—वैसे ही तोपों की सलामी और भाँति-भाँति के खिताब और टाइटिल देकर इन राजाओं को सरकार ने फुसला लिया। भला हम यह पूछते हैं कि सेधियाँ को 'ऑनरेरी जनरल' अथवा 'काश्मीराधिपति' की 'सिपहलरहिंद' और जयपुर बूंदी प्रभृत्ति को 'कौंसिलर' की उपाधि से क्या लाभ हुआ? हाँ, इन महाराजाओं को जो यत्किंचित् स्वच्छंदता का आभासमात्र था वह भी अब जाता रहा। काम पड़ने पर पहले द्रव्य सम्बन्धी अथवा युद्ध सम्बन्धी सहायता के लिए अब पहले ये ही लोग पूछे जाएँगे। इस उपाधिदान का फल तो हम तब समझते कि लोगों को अधिक सेना भर्ती करने की आज्ञा मिल जाती—अथवा हिन्दुस्तानियों के जो योग्य पुरुष हैं वे काले-गोरे को न निर्ख किश्विना बराबर से सिविल सर्विस का अधिकार पाते।"[1]

'ब्राह्मण' ने 'शालिग्राम जी कचहरी में' संपादकीय लेख में रंगभेद-नीति और अंग्रेजी न्याय-व्यवस्था पर तीखा प्रहार किया था "हाय! हमारे काले रंग की यह दुर्दशा! कोई कैसा ही योग्य पुरुष क्यों न हो तो भी इस अभागे 'नेटिव' नाम के कारण कुछ जँचता ही नहीं। हमारे बाबू साहब (सुरेन्द्र नाथ बनर्जी) को क्षमा माँगना नामंजूर हुआ और वे हाईकोर्ट की अवमानना का दोष लगाकर दो महीने के लिए कारागार भेज दिए गए।[2]"

ब्रिटिश सरकार की कर सम्बन्धी नीति के दुष्प्रभाव से सम्पूर्ण निर्धन भारतीय जनता का जीवन दुष्कर तथा कष्टकर हो उठा था।[3]

लॉर्ड लिटन काबुल आदि के युद्ध-व्यय की क्षतिपूर्ति भारत की जनता से वसूल करना चाहते थे। 'भारत मित्र', 'सारसुधानिधि' आदि अधिकांश राजनीति प्रधान पत्रों ने इसका स्पष्ट विरोध किया था।[4] तत्कालीन कुछ निर्भीक राष्ट्रीय अग्रलेखों में 'काबुल का युद्ध' (सारसुधानिधि 20 जनवरी 1879) 'भारतीय प्रजा और ब्रिटिश राजनीति' (12 मई 1879 सारसुधानिधि), 'भारत वर्ष से इंग्लैंड को लाभ होता है या नहीं?' (उचित वक्ता 11 सितंबर 1880), 'अपने को ठाँव नहीं पाँच पीर संग चलै, (भारत मित्र साप्ताहिक) 19 सितम्बर 1878) आदि थे।

स्थानीय समस्याएँ—स्थानीय समस्याओं से पाठकों का जीवन सबसे अधिक प्रभावित होता है क्योंकि पाठकों की सर्वाधिक अभिरुचि आसपास के परिवेश और समस्याओं में होती है। उत्तर 19वीं शती के पत्र-संपादक स्थानीय जनता के दुःख-दर्द को

---

1. समय विनोद, 1 फरवरी 1877, पृ० 3
2. 'ब्राह्मण', (मासिक)
2. उचित वक्ता, 17 जनवरी, 1822
4. भारत मित्र 1878 (21-22 संख्या) पुनउंद्धृत कृष्णविहारी मिश्र, हिन्दी पत्रकारिता, पृ० 112
5. सारसुधानिधि 1879 (वर्ष 1 अंक 38)

प्रकट करना पहला दायित्व समझता था। 'हिन्दी प्रदीप' ने प्रयाग शहर की कुव्यवस्था, मेलों में पुलिस और प्रशासन के अत्याचारों को उघाड़कर जनता के सामने रखा "मि० विसन्जण्इट मेजिस्ट्रेट इलाहाबाद जिनके सिपुर्द इस मेले का इंतजाम किया गया था सिटी पुलिस इन्सपेक्टर की बहुत तारीफ गाय रिपोर्ट में इसकी बदइंतजामियों की भरसक तोप-ताप की है और अंत में पुलिस इंसपेक्टर को 500 रुपये इनाम की सिफारिश की है। जीती मक्खी लील जाना इसी को कहते हैं।—क्या पंडे, क्या दुकानदार कोई इस मेले के इंतजाम से खुश नहीं रहे बल्कि जो अत्याचार लोगों पर हुआ है उसे कहते-लिखते कँपकँपी आती है।'[1]

'भारत जीवन' ने आत्मशासन प्रणाली के अन्तर्गत काशी के योग्य सभापति के निर्वाचन पर जोर देते हुए कहा "आत्मशासन प्रणाली जो हमें मिली है तो उचित यह कि इसका यथोचित बर्ताव करें।"[2]

'समय विनोद' ने स्थानीय कुली और मजदूरों की समस्या को उठाते हुए लिखा "बेचारे कुली औरम जदूर कहते हैं कि पहले घास-लकड़ी बेचकर निर्वाह करते थे अब वह भी छीना गया, जंगल अपने आधीन कर लिया, पत्ता तक तोड़ने की आज्ञा न रही—लकड़हारों की अपेक्षा मोल लेने वालों पर योग्य महसूल लग जाए तो कदाचित ऐसी तंगी लकड़ियों की नहीं रहेगी।"[3]

इस प्रकार तत्कालीन पत्रकारिता ने अनगिनत अग्रलेखों के माध्यम से युगीन-दायित्व तथा चिंतन की युगानुकूल आवश्यकता को पूर्ण कर जन-जागरण का पल्लवन किया। उनका सुस्पष्ट चिंतन, निष्पक्ष विवेचन, तलस्पर्शी बौद्धिक दृष्टि ने जनमत को प्रभावित कर राष्ट्रहित के लिए संगठित किया।

3. **व्यंग्य-विनोदात्मक स्तंभ**—यह पत्र-पत्रिकाओं की सामग्री का सबसे जीवंत तथा उपयोगी स्तंभ होता है। प्रायः सभी पत्र-पत्रिकाएँ सरसता और लोकप्रियता बनाए रखने के लिए मनोरंजक सामग्री को अवश्य प्रकाशित करती है। इस सशक्त हास-परिहास पूर्ण स्तंभ में बड़ी-से-बड़ी कटु-तीखी बात ऐसे हल्की-फुल्की कटाक्ष करती सुरुचिपूर्ण भाषा और सर्वग्राह्य रोचक शैली में कह दी जाती है कि जो पाठकों का भरपूर मनोरंजन करने के साथ अचूक गंभीर वार भी कर जाती है।

हिन्दी पत्र-पत्रिकाओं की व्यंग्य-विनोदात्मक सामग्री भी जन-जागृति फैलाने का एक अस्त्र थी। इनमें चुटकुलों, लटकों, विभिन्न हास्य-व्यंग्यपूर्ण अभिधानों के माध्यम से सामाजिक विसंगतियों, युगीन अन्तर्विरोध तथा विदेशी शासन की कुटिल चालों को समझने के लिए पाठकों को जमी-आसमाँ एक नहीं करना पड़ता था तथा पत्र-पत्रिकाएँ राजनीतिक-धार्मिक-सामाजिक विषयों पर मारक चोट करके भी ब्रिटिश-कोप तथा

1. हिन्दी प्रदीप, अक्टूबर 1882, पृ० 14
2. भारत जीवन, 17 मार्च 1884
3. समय विनोद, 1 मई 1876, पृ० 6

सामाजिक-बहिष्कार से साफ बच निकलती थी। भारतेन्दु कालीन पत्रकारिता में प्रकाशित साहित्य का विशिष्ट गुण हास्य-व्यंग्यपूर्ण सजीव लेखन है।[1] उनका विनोद, जिंदादिली और परिहास देखते ही बनता है।

तत्कालीन पत्रों ने विनोद और व्यंग्य से समन्वित दमदार 'अभिधानों' के माध्यम से पश्चिमोन्मुख युवावर्ग, विदेशी सत्ता, भारतीय दुर्बलताओं और युगीन विषम परिवेश पर कटाक्ष करने का विलक्षण ढंग निकाला था। हास्य-व्यंग्यपूर्ण अभिधानों की मीठी-चरपरी चुटकी की चुभन पाठकों को अंदर तक हिला जाती है कुछ रोचक हास्य-व्यंग्यात्मक सामग्री इस प्रकार है।

नया अभिधान 'अवध मंच' के ढंग पर[2]—

अमीर : हिंदुस्तान के गदहे।
आलस्य : हम लोगों की जन्म-घूंटी।
एका : जिसका बीज यहाँ बोया नहीं गया।
पढ़े-लिखे : कुलियों से भी सस्ते, कौड़ी के तीन-तीन।
बेरोजगारी : अंग्रेजी राज की शोभा।
साहब लोग : दोगले, किरानी यूरेशियन।
राजा : शतरंज के मोहरे।
पण्डित : फूल्स ऑफ नइन्टींथ सेंचुरी।
जाति : हिन्दुस्तानियों को अंधी कोठरी में बंद रखने की तदबीर।

नये गढ़न्त के नये-नये अर्थ[3]—

कलयुग के देवता : विलाइत की स्वर्ग-भूमि के निवासी।
भाग्य के सिकन्दर : मैनचेस्टर के जुलाहे।
नरक : दुर्भिक्ष, कर पीड़ित भारत की वसुंधरा।
पवित्र तीर्थ : होटेल।
जंगलीभाषा : संस्कृत या हिन्दी।

शुरू साल के खुशी के लतीफे[4]—

प्रायः सभी साहित्यिक पत्र-पत्रिकाओं ने हास्य-व्यंग्यपूर्ण सामग्री के प्रकाशन द्वारा जातिप्रथा, अस्पृश्यता, अंग्रेज अंधभक्ति तथा पाश्चात्य सभ्यता आदि पर तीखी-

1. रामचन्द्र शुक्ल : हिन्दी साहित्य का इतिहास
2. हिन्दी प्रदीप, दिसंबर 1876, पृ० 10
   और देखिए सारसुधानिधि, 18 दिसंबर 1880
3. हिन्दी प्रदीप, जनवरी-फरवरी-मार्च-अप्रैल 1896, पृ० 23
4. उपरिवत् जनवरी 1883, पृ० 23-24

मीठी चुटकी ली है और पाठकों को सुधार के लिए उत्तेजित किया ।[1]

भारतेन्दु ने 'हरिश्चन्द्र मैगजीन' में आंग्ल शासकों की असलियत को व्यंग्यात्मक प्रश्नोत्तर शैली में खोलकर रख दिया ।[2] इस प्रकार इस स्तंभ में गंभीर राजनीतिक कटाक्ष कर सामयिक राजनीति और सामाजिक कमजोरियों को निशाना बनाया गया था ।

4. **पाठकों के पत्र**—संपादक के नाम प्रकाशित पत्रों में पाठकों की प्रतिक्रिया, मन की बात और सामयिक विविध विषयों पर राय खुलकर व्यक्त होती है । वस्तुतः यह जन-स्तंभ जनतंत्र में प्रत्येक नागरिक के लिए खुला जनमंच होता है जो जनसामान्य के विचारों का प्रतिनिधित्व करता है । पत्र-पत्रिका की गरिमा इसी में होती है कि वह कटु आलोचकों तथा पक्ष-विपक्ष दोनों के पत्र प्रकाशित करें किन्तु उनकी भाषा शिष्ट एवं शालीन होनी चाहिए क्योंकि जनता भावुक और संवेदनशील अधिक होती है, तर्कशील कम । ये पत्र कभी-कभी जन-आंदोलन का रूप धारण कर लेते हैं ।[3]

उत्तर उन्नीसवीं शती के जागरण काल में संपादकों और पाठकों में सीधा-सच्चा रिश्ता था । पाठक संपादक को अपना अंतरंग मित्र और हितैषी समझकर बिना किसी दुराव के अधिकार के साथ कभी उनको प्रशंसात्मक पत्र लिखते, कभी शिकायत, गिला-शिकवा करते और कभी अहम् राष्ट्रीय समस्याओं पर तीखे उद्गार व्यक्त करते । तत्कालीन पत्रों में सैकड़ों की संख्या में अत्यन्त सरस शैली में पत्र प्रकाशित हुए हैं । 'हिन्दी प्रदीप' में प्रकाशित एक मनोरंजक पत्र उदाहरणार्थ प्रस्तुत है ।[4]

मान्यवर, संपादक महोदय,

आपके प्रतिमास की सूचना देखकर मन में सन्देह होता है कि मैंने मूल्य दिया या नहीं । स्मरण शक्ति को बहुत कुछ उत्तेजना देता हूँ—तब यह गुनगुनाकर कहती है—अरे, रहने दे, भकुआ संपादक तुझे मिले हैं । न देगा तो क्या तेरा नाम छाप देंगे ।—क्या तू ही अकेला है, बहुतेरे पड़े हैं, क्या तेरे ही देने से संपादक का घाटा पूरा हो जाता है । इसी में सब रुपया बर्बाद कर देगा तो बीबी नसीबन को क्या देगा । अभी तो तुझे झूमन हलवाई का देना है, पहले उसे तो अदा कर । तीन मन मिठाई के दाम बाकी हैं । बीबी के लिए जो बनारसी साड़ी ली थी उसका दाम गिल्लीमल बजाज को चाहिए । चिगुन गांधी को फुलेल और इत्र का दाम बाकी है । संपादक को देकर क्या होगा । न दीन का न दुनिया का ।—

प्रिय संपादक ! मैं इसी सात-पाँच में पड़ा विधाता ने जो हम भारतीयों के लिए

1. दृष्टव्य है—पियूष प्रवाह—'अति सर्वत्र वर्जयेत' (25 अप्रैल 1884), 'किस-किस का कहा मानै' (25 जून 1884), 'ब्रह्माजी आपकी चूक कहाँ तक गिनावैं' (25 मई 1884), 'भारत जीवन' (13 जून 1887, पृ० 6) 'ब्राह्मण' (खण्ड 9, संख्या 8, पृ० 18), 'हरिश्चन्द्र मैगजीन' (15 मई 1874, पृ० 214, 215) आदि
2. हरिश्चन्द्र मैगजीन, 15 अक्टूबर 1873, पृ० 9-10
3. सं० वेद प्रताप वैदिक, हिन्दी पत्रकारिता : विविध आयाम, पृ० 481
4. हिन्दी प्रदीप, जून 1880

दास्य कर्म नियत कर रखा है, दस में चार इसी में पच्चमान रहता हूँ। जब से आप अपना पत्र भेजकर अपने उत्तेजक रूपी अमृत की घूंटी मुझे जबरदस्ती घुटाने लगे तब से अपना भला या बुरा पहचानने की कुछ अक्ल आ गई है। पर प्रकृति को शीघ्र बदल पाना महा दुर्घट है। इसलिए आग्रह करता हूँ कि आप पत्र भेजना बन्द न करें और जो हमारी सलाह माने तो एक बार नादेहन ग्राहकों की लिस्ट छाप दें।

अफ़सोस कि हम हिन्दू कहलाते हैं और हिन्दी को न ही चाहते—इतना कहने पर भी तो उत्तेजना न हो तो हिन्दी के विपक्षियों का हिन्दू होना अपराध है। अब विशेष प्रार्थना है कि कोई महाशय मेरे इस कहने का बुरा न माने। मैंने यथार्थ की ओर और जैसा बीत रहा है उसी का उल्लेख कर लेखनी को इतना कष्ट दिया। किमधिकम्

आपका शुभाकांक्षी
महावीर प्रसाद
हजारी बाग
जून, 1880

उपर्युक्त पत्र से स्पष्ट है कि उस समय शिक्षित पाठक भी सच्चे हृदय से हिन्दी पत्रकारिता के विकास की आकांक्षा रखते थे। इससे हिन्दी संपादकों की कठिनाइयों तथा समाज की रुचि पर भी प्रकाश पड़ता है।

3.3 हिन्दी पत्रकारिता : विविध समाचार

3.3 विविध समाचार

1. समाचार क्या है ? आधुनिक 'समाचार' शब्द अंग्रेजी भाषा के 'न्यूज' शब्द का पर्याय है जो लेटिन के 'नोवा' शब्द से निर्मित है। जिसका अर्थ है नवीन।[1] नवीनता और ताजगी समाचारों का प्राण होती है। संस्कृत में समाचार 'आचरण' या 'उचित चाल-चलन' तथा हिन्दी कोश में 'न्यूज' के अर्थ में प्रयुक्त हुआ है।[2]

प्रत्येक सूचना या नवीन जानकारी को समाचार नहीं कहा जा सकता। प्रो० विलाई ब्लेयर के अनुसार "अनेक व्यक्तियों की अभिरुचि जिस सामयिक बात में होती है, वह समाचार है।"[3]

हार्पर लीच और जान०सी० करोल ने अपनी पुस्तक 'समाचार' में लिखा है, 'समाचार अति गतिशील साहित्य है। समाचार समय के करघे पर इतिहास के बहुरंगे बेल बूटे वाले कपड़े को बुनने वाले तकुए हैं।'[4]

---

1. एम० चलपति राव, समाचारपत्र, पृ० 8
2. देखिए, प्रस्तुत प्रबन्ध का दूसरा अध्याय
3. संपादक वेदप्रताप वैदिक, हिन्दी पत्रकारिता : विबिध आयाम, पृ० 737
4. प्रेमनाथ चतुर्वेदी, समाचार-संपादन, पृ० 16-17

संक्षेप में कहा जा सकता है कि 'समाचार' किसी सत्य घटना, परिवर्तन या विचार का बेलाग ताजा विवरण है जिसमें बहुसंख्यक पाठकों की अभिरुचि होती है। समाचार के मूल तत्त्व हैं—यथार्थता, नवीनता, सार्थकता और बहुसंख्यक पाठकों की अभिरुचि आदि।

आधुनिक युग में पाठकों के ज्ञान और अभिरुचि का क्षेत्र अत्यन्त विस्तृत हो गया है। आधुनिक संवाददाता का कार्य जटिल हो गया है। किन्तु उन्नीसवीं शती के सामान्य पाठकों में समाचारों के प्रति अभिरुचि अधिक निर्मित नहीं हो पाई थी। उनमें नवीन जानकारी एवं ज्ञान-प्राप्ति के प्रति तीव्र ललक का अभाव था।

हिन्दी की अधिकांश पत्रिकाओं के समाचार अंग्रेजी या अन्य देशी भाषा के पत्रों से नकल करके छापे जाते थे। संचार-साधनों की न्यूनता थी। 'रायटर कंपनी' समाचार एजेंसी (1878) की समाचार भेजने की दर बहुत ऊँची थी। 'हिन्दुस्तान समाचार' और 'समाचार-भारती' जैसी हिन्दी-भाषी समाचार-समितियाँ उस हिन्दी विरोधी परतंत्र परिवेश में कैसे पनपती जबकि वे स्वतंत्र भारत में ही विकसित नहीं हो पायीं। फलतः तत्कालीन हिन्दी पत्र-पत्रिकाएँ बासी-अनुवादित समाचारों के बल पर जीवित और लोकप्रिय होकर जन-जागृति नहीं ला सकती थी यही कारण था। कि वे विचार-प्रधान पत्रिकाओं के रूप में विकसित हुईं।

हिन्दी में दैनिक समाचार-पत्रों की न्यूनता के कारण साप्ताहिक-मासिक आदि पत्रिकाएँ ही हर अंक में 'समाचारावली' प्रकाशित करती थीं। हिन्दी प्रदीप के संपादक का मत था कि साहित्यिक मासिक में समाचारों का संकलन नहीं होना चाहिए।[1] किन्तु फिर भी संपादक समाचारों को साहित्यिक पुट देकर आकर्षक भंगिमा में प्रस्तुत करते थे।

विविध समाचार तत्कालीन समाचारों को निम्नलिखित वर्गों में बाँटकर विश्लेषित किया जा सकता है :

1. स्थानीय समाचार, 2. राष्ट्रीय, 3. अन्तर्राष्ट्रीय, 4. मौसम, खेल, पदवी आदि, 5. सामाजिक-राजनीतिक व जागरण के समाचार, 6. मानवीय, 7. आर्थिक आदि।

2. स्थानीय—तत्कालीन पत्रों ने स्थानीय प्रशासन की कुव्यवस्था, भ्रष्ट-कृत्यों तथा जन-हित के प्रश्नों और समस्याओं पर खुलकर समाचार प्रकाशित किए थे। 'ब्राह्मण' ने कानपुर में गंगा-जल के प्रदूषण का समाचार प्रकाशित करके म्युनिसिपल कमेटी की लापरवाही पर कटाक्ष किया था, "अब गंगाजी का यह हाल है कि हमारे कानपुर में चमड़े का कारखाना खुला है। कई दिनों से उसका दुर्गन्ध पूरित जल कभी-कभी गंगा में आ जाता है। जिसके कारण गंगा-स्नान, पितृ-तर्पण और जलपान करने को जी नहीं

1. मासिक पत्रों में समाचारावली खासकर ऐसे में जिसके निकलने का कुछ कयाम नहीं नहीं है। समाचारावली निरर्थक और लेख की उत्तमता में धब्बा है।" हिन्दी प्रदीप, जौलाई 1882, पृ० 16

चाहता है और रोग फैलने का भी डर अधिक संभव है पर न जाने हमारी म्युनिसिपल कमेटी किसी नींद में सो रही है।"[1] यह समाचार उस काल में जल-प्रदूषण के प्रति सजगता को प्रकट करता है।

हिन्दी पत्र-पत्रिकाएं स्थानीय जनता की सामाजिक-आर्थिक समस्याओं को प्रकाशित करना अपना दायित्व समझती थी। 'समय विनोद' ने कुर्मांचल समाज में प्रचलित कुत्सित वेश्या-वृत्ति को समाप्त करने के लिए स्थानीय सरकार से अपील की थी।[2]

पत्रों में समाचारों को रोचक बनाने की शैली निराली हैं।[3]

राष्ट्रीय —उत्तर 19वीं शती की भारतेन्दुकालीन पत्रकारिता ने राष्ट्रीयता-भाव के उन्नयन के लिए राष्ट्रीय समाचारों को सर्वाधिक प्राथमिकता दी थीं। उन्होंने सरकार की कर, अकाल तथा रंग-भेद, युद्ध आदि के समाचार निरंतर प्रकाशित किए थे। तत्कालीन पत्र-पत्रिकाएँ जनसामान्य के दुःख-सुःख से जुड़ी हुई थीं। पत्रकार भी अकाल, महँगाई और सुरसा की तरह बढ़ते टैक्सों को झेल रहा था इसलिए उसके शब्द-शब्द में सच्चाई और दर्द उभर आया है। "सुनने में आता है कि इन्दापुर के बाजार में एक रकम घास का दाना बिकता है दरिद्र लोग उसी दाने को खरीदकर खाते हैं।···प्रायः रोज ही 1/2 आदमी अन्न के अभाव में मरते हैं। अन्न आदि चीजों का अभाव जिस प्रकार हो रहा है इससे बम्बई क्या, भारतवर्ष के सभी स्थानों में ऐसी आत्महत्या की खबर मिलें तो कुछ आश्चर्य नहीं है।"[4] समाचार में दुर्भिक्ष-पीड़ित भारत का यथार्थ चित्र उभर आया है।

दुर्भिक्ष के कठिन समय में भी अंग्रेजी शासक लगान आदि में कोई राहत नहीं देते थे। सन् 1877 और 78 की सालाना रिपोर्ट देखने से मालूम हुआ कि सरकारी खजाने में 53450213 रुपया आमदनी हुई।—सरकार ने दुँष्काल के सबब किसी को एक पैसे की रियायत नहीं दी।

सरकार अकाल पीड़ित जनता से ही राहत कार्यों के लिए कर वसूल करती थी।[5] अधिकांश जागरूक पत्र-पत्रिकाएँ राष्ट्रीय भावना को भड़काने वाले समाचार प्रकाशित करने में तनिक भी नहीं हिचकिचाती थीं। "ट्रूथ समाचार लिखता है यदि लॉर्ड लिटन और जोंष्ट्रची साहब चीन या टर्की में होते तो अब तक सिर धड़ से अलग कर दिया होता, यदि रशिया के होते तो उनको बहुत समय साइबेरिया की खानों में काटना पड़ता, अगर

---

1. ब्राह्मण, 15 जून 1883 ई०, पृ० 41
2. समय विनोद, तत्संयुक्त सुदर्शन समाचार, 15 फरवरी 1877, पृ० 2
3. हिन्दी प्रदीप, फरवरी 1879, पृ० 15
4. वही, अप्रैल 1879, पृ० 12
5. ब्राह्मण, 15 अप्रैल 1883, पृ० 11

जर्मनी में होते तो किले में बंद कर दिये जाते।"[1]

तत्कालीन पत्रों ने अभानवीय राष्ट्रीय शोषण, बलात्कार जैसी राजनीतिक हलचलों के समाचार भी निर्भीकता से प्रकाशित किये ताकि भारतीयों में शासन के प्रति विद्रोहभाव तथा स्वराष्ट्र के प्रति निष्ठा जागृत हो सके।

अंतर्राष्ट्रीय—तत्कालीन पत्रकारिता 19वीं शताब्दी में विश्व की राजनीतिक हलचलों और ज्ञान-विज्ञान की आधुनिक प्रगति के समाचार निष्पक्ष विवेचन के साथ प्रकाशित करती थी ताकि भारतीय उनसे सबक ले के कुछ प्रेरणा ग्रहण करें, उनकी ज्ञान-पिपासा बढ़े और वे बौद्धिक-राजनीतिक दृष्टि से जागरूक हों।

परतंत्र भारतीय परिवेश में अनेक ब्रिटिश समर्थक पत्र अनेक प्रकार की अफवाह और अविश्वसनीय आक्षेप छापते रहते थे जिनका सजग होकर खण्डन करना तत्कालीन पत्र अपना दायित्व समझते थे। 'इंग्लैंड के लोगों ने गप उड़ाई है बहुत से मरहठे राजे रूसियों से छुपाछुपी मिले हुए हैं। हम नहीं जानते यह असंभव बात उन लोगों के मन में कैसे आयी।"[2]

जनमानस की विचारधारा को सही मोड़ देने के लिए ऐसे अन्तर्राष्ट्रीय समाचारों का चयन किया जाता था जो पाठकों पर मनोवैज्ञानिक प्रभाव डालकर नव राष्ट्रीय चेतना जागृत कर सके। 'चीन आमच नगरस्थ अमेरिकान कौनसिल ने कहा है कि आमच में विलायती कपड़े का प्रचलन करना मैनचेस्टर का कर्त्तव्य है परन्तु उस नगर के 20 हजार निवासियों ने यह आपत्ति की है कि विलायती कपड़े से देशी कपड़ा मजबूत होता है। यह हिन्दुस्तान नहीं है कि सस्ता देख भूल जाए।[3]

इस उपर्युक्त समाचार का ध्येय इंग्लैंड निर्मित वस्त्रों के बहिष्कार की प्रेरणा देना था। तत्कालीन पत्रिकाएं भारतीयों में विद्या-प्राप्ति के प्रति उत्साह का संचार कर देना चाहती थीं, 'इंग्लैंड के लोग विद्या की उन्नति के लिए कैसे यत्नवान होते हैं यह बात नीचे लिखी तालिकाओं से मिल जायगी।[4]

विद्यालय का नाम	पृथ्वी का एक 2 परिमाण	आय
अक्सफोर्ड	6782	110000 रुपए
क्रेंब्रिज विश्वविद्यालय	2500	3000

'पियूष प्रवाह' ने जापान का दृष्टांत प्रस्तुत करते हुए शिक्षा-संबंधी समाचार

1. उचित वक्ता 1880, (वर्ष 1 अंक 6) पुनर्उद्धृत 'हिन्दी पत्रकारिता'—डॉ० कृष्ण बिहारी मिश्र
2. हिन्दी प्रदीप, सितंबर 1877, पृष्ठ 15
3. उचित वक्ता, 14 अगस्त 1880, (वर्ष 1 अंक 2)
4. भारत मित्र, 19 सितंबर 1878, पृष्ठ 38

प्रस्तुत किए थे।[1] इंग्लैंड में बसे भारतीयों की बढ़ती राष्ट्रीय चेतना के समाचार भी ये सजगता से छापती थीं।[2]

3. मौसम, खेल, पदवी संबंधी--तत्कालीन पत्र-पत्रिकाओं में देश के विभिन्न भागों के वृष्टि, बाढ़, सूखा आदि के समाचार विस्तार से छपते थे क्योंकि समस्त भारतीय जीवन इनसे प्रभावित होता था।[3] इनमें वृष्टि, अकाल आदि दैवी विपत्तियों के शमन के लिए धार्मिक अनुष्ठानों के समाचार भी प्रकाशित होते थे।[4] मौसम संबंधी समाचारों को भी आकर्षक भंगिमा के साथ प्रस्तुत किया जाता, "आरम्भ से अब तक मेघ ने पानी की बूंदों के लिए भी तरसाया पर खेती करने वालों को भली-भाँति रूलाकर अब अंतिम पानी बरसाया।[5]

खेल, पदवी—पत्रकारिता खेलों, अधिकारियों के दौरे, पद-पदवी, जुर्माने आदि के समाचारों के प्रति सजग थी। खेल संबंधी समाचार का एक नमूना द्रष्टव्य है—'देश-देशान्तर के मल्ल यहाँ एकत्र हुए हैं। दो दिन से खुसरूबाग में कुश्ती का तमाशा हो रहा है। तमाशबीन को एक रुपया, आठ आना, चार आना टिकट देना पड़ता है।"[6] खेल-समाचार से ज्ञात होता है कि कुश्ती को कितनी लोकप्रियता थी। खेलों पर टिकट लगाना उनकी जनप्रियता और महत्ता को सूचित करता है।

'पदवी-प्राप्ति' के समाचारों में व्यंग्य और चैतन्यता की कौंध साफ दिखायी देती है, "अलीगढ़ के प्रसिद्ध आनरेबुल सैयद अहमद खाँ साहब को के० सी० एस० आई० की पदवी बड़े मौके से मिली अर्थात् नेशनल क़ांग्रेस में सहयोग न देने के उपरांत ही। हम अनुमान करते है कि यदि सैयद साहब नेशनल कांग्रेस में गए होते तो कदाचित् उन्हें यह खिताब न मिलता। भारतवासियों को चाहिए कि यदि वे अपने नाम के पीछे दो-चार अक्षर लगाना चाहें तो अपने देश और देशवासियों की बुराइयाँ किया करें।"[7]

उच्च पदाधिकारी जनता का दुःख-दर्द देखने के लिए भ्रमण नहीं करते थे बल्कि सैर-सपाटे और मनोरंजन के लिए दौरे किए जाते थे किन्तु उनके भव्य-स्वागत के लिए

---

1. 'जापान में इन दिनों 28443 स्कूल हैं जिनमें पढ़ने वालों की संख्या 30 लाख है। सिवाय इनके लड़कियों के स्कूल और नार्मल स्कूल वगैरह 163 हैं जिनमें 11298 पढ़ने वाले हैं इससे यह प्रगट फलित हुआ कि हजार के पीछे पचासी जापानी पढ़ते हैं। (भारतवासी गण चेतो)"—पियूष प्रवाह, 25 मई 1884
2. सार सुधानिधि, 13 जनवरी 1879
3. हिन्दी प्रदीप सितंबर 1878, पृष्ठ 16
4. (क) देश हितैषी, 1882, अंक 5
   (ख) भारतमित्र, 17 मई 1878
5. पियूष प्रवाह, 25 अक्टूबर 1885, पृष्ठ 17
6. हिन्दी प्रदीप, फरवरी 1878, पृष्ठ 7
7. भारत जीवन, 23 जनवरी 1888

अधिकांश तालुकेदार, जमींदार ऋणग्रस्त हो जाते थे।[1]

4. सामाजिक-सांस्कृतिक जागरण के समाचार—'जागरण काल' की पत्रकारिता ने स्त्री-शिक्षा, सामाजिक-सांस्कृतिक नवजागरण आदि के द्वारा राष्ट्रीय-स्पंदन का बीड़ा उठाया था। शिक्षा-संबंधी-नवचेतना तथा समाज की कूपमंडूकता पर दृष्टिपात करते हुए समाचार में कहा गया—'कलकत्ते में मोटी दासी नामा 19 वर्ष की एक युवा स्त्री ने अपने सुसुर से पाठशाला पढ़ने की आज्ञा चाही। सुसुर के आज्ञा न देने पर वह कुछ दिन हुए अफीम खाकर मर गई'[2] (पा०) यह समाचार तत्कालीन भारतीय समाज में नारी की हीन-दीन स्थिति से अवगत करा देता है।

आज से लगभग सौ वर्ष पूर्व भी प्रशासन आदि में पुलिस अत्याचारों, भ्रष्टाचार और रिश्वत के समाचारों को महत्व दिया जाता जो पत्रों की सामाजिक चेतना को प्रकट करता है। 'यहाँ का स्टेशन मास्टर जो रिश्वत के मामिले में गिरफ्तार था, न जाने कहाँ भाग गया।[3] 'पियूप प्रवाह' ने रेलवे, डाक आदि विभागों में फैले भ्रष्टाचार को अनावृत्त करते हुए अनेक समाचार प्रकाशित किये थे। 'लाहौर के डाकघर में 1100 रुपया गप्प हो गया है (कुछ चिंता नहीं गतन्नशोचामि।'[4]

5. मानवीय समाचार—समाज के नैतिक पतन, विपन्नता और दायित्व-हीनता को इंगित करते हुए तत्कालीन पत्रों ने मानवीय समाचारों का भी प्रकाशन किया किया था 'कविवचन सुधा' ने समस्तीपुर का समाचार प्रकाशित किया था 'यहाँ एक औरत ने गरीबी की बाइस अपने दो महीने के लड़के को 2/- रुपए में बेच डाला।[5] 'ब्राह्मण' ने रुपए के लिए पिता को मारने वाले का समाचार प्रकाशित किया, 'सलेम के जज्ज की अदालत में एक पिताघाती पुत्र को फाँसी हुई। पुत्र ने पिता से रुपया माँगा। पिता ने न दिया। बाद में पुत्र ने छुरी से पिता की जान ले ली और आप भी फांसी पर चढ़ गये।"[6] अंग्रेजों द्वारा शिक्षित भारतीयों को अपमानित-प्रताड़ित करने के समाचार छपते ही रहते थे।'[7] तत्कालीन शिक्षित वर्ग अत्याचारों के विरुद्ध आवाज उठाने लगा था।

6. आर्थिक समाचार—आर्थिक लेन-देन, बाजार भाव आदि समाचार देने का

1. (क) आर्य दर्पण, सितंबर 1888, रिपोर्ट आव नेटिव न्यूज पेपर्स, एन० डब्ल्यू० पी० 1888, पृष्ठ 6703
   (ख) हिंदोस्थान, 11 सितंबर 1888, उपरिवत्
2. हिन्दी प्रदीप, अक्तूबर 1877, पृष्ठ 2
3. हिन्दी प्रदीप, नवंबर, 1877, पृष्ठ 16
4. पियूष प्रवाह, 25 जून, 1884, पृष्ठ 10
5. कविवचन सुधा, 28 जनवरी, 1884, पृष्ठ 7-8
6. ब्राह्मण, 15 मई, 1883, पृष्ठ 34-35
7. उचितवक्ता, 1880 वर्ष 1 अंक 5

अंदाज भी निराला था, 'नया अन्न कट कर मंडियों में आने लगा। 12 सेर से ऊपर गेहूँ, चना, चावल आदि का भाव न बढ़ा—लक्ष्मी, सरस्वती, दुर्गा तीनों ने तो कभी से हमको छोड़ रखा था, अब अन्नपूर्णा ने भी कदम बढ़ाना शुरू कर दिया।"[1]

भारतीय जनता अन्न आदि के विदेशों में निर्यात से भुखमरी की हालत पर पहुँच चुकी थी। 'भारतमित्र' नै लगभग प्रत्येक अंक में प्रामाणिक आर्थिक-समीक्षा, अन्न-निर्यात आदि के आँकड़े प्रस्तुत किए थे, "1877 साल के जुलाई महीने तक धान और चावल 2859188 मन, गेहूँ 1489262 तिल 662329 मन, तीसी 663329 मन, चीनी 113695 मन किन्तु अब की साल धान और चावल 868952 मन, गेहूँ 102027 मन, तिल 194899 मन—इस देश के बाहर गया।"[2]

भारतीय जनता सीमित आय तथा क्रय-शक्ति के अभाव में सस्ते अन्न को भी नहीं खरीद पाती थी। 'सारसुधानिधि' के प्रत्येक अंक में कपड़ा, मसालों आदि की कलकत्ता बाजार की दर इस प्रकार छपती थी :[3]

कपड़ा कोरा	पन्हापन	दर से दर
लंकिकाट	2। हत्था 5	2॥=) 3।)
नैनसुख	2। " 12 × 12	1। ॥) 1॥=)
मलमल	2॥ " 12 × 12	1 ॥) 1 ॥)
विलायती गज प्रति दर		।॥) । 1।॥)
किराना	मन प्रति	दर से दर
सौंफ	"	10) 10)
जीरा	"	25) 30)
धनिया	"	2॥) 4) ।
बड़ी इलायची	"	20) 21)
नारियल तेल	"	16॥)

विविध समाचारों के आधार पर कहा जा सकता है कि हिन्दी पत्र-पत्रिकाओं ने हर विषय की जानकारी और समाचार देकर ज्ञान के नये आयाम खोले। उन्होंने भारतीयों को देश की वास्तविक स्थिति से अवगत कराके उनमें नव चेतना जागृत करने का कितना कठिन दायित्व निभाया था जबकि उनके पास आर्थिक-संचार साधन अत्यन्त सीमित थे। अधिकांश समाचार राष्ट्रीय जागरण से संबद्ध थे। समाचारों का विषय वैविध्य, प्रकृति और शिल्प लेखन से अनुमान लगाया जा सकता है कि समाचारों में संपादकीय टिप्पणी जोड़कर लोक-चेतना लायी जाती थी। उनकी प्रवृत्ति सुझावपरक है जो आधुनिक

1. हिन्दी प्रदीप, अप्रैल 1878, पृष्ठ 15
2. भारत मित्र, 7 नवंबर 1878, पृष्ठ 66
3. सारसुधानिधि, 20 जनवरी 1879, पृष्ठ 24

समाचारों में निष्पक्षता की दृष्टि से उपयुक्त नहीं मानी जाती।

7. भाषा-शैली—समाचारी भाषा सुबोध, स्पष्ट और रोचक है, कहीं उसमें दुरूह, क्लिष्ट और अस्पष्ट शब्दों का प्रयोग नहीं हुआ है। अंग्रेजी के प्रचलित शब्दों का प्रयोग नागरी में मूल शब्द लिखकर हुआ है उदाहरणार्थ कान्सटेबल, फेमिन, बिल, टैक्स आदि। समाचारों की भाषा व्यवहारिक बोलचाल की मुहावरेदार है जो आज भी समाचार के लिए उपयुक्त मानी जाती है। कहीं-कहीं समाचारों को साहित्यिक पुट देकर आकर्षक प्रस्तुतिकरण किया गया है। तत्कालीन भाषा शिल्प और स्टाइल परवर्ती पत्रकारिता ने भी अपनाया था जैसे सरस्वती, कर्मयोगी, प्रताप, विशाल भारत आदि।

8. निष्कर्षतः तत्कालीन पत्रकारिता का दृष्टिकोण एवं उद्देश्य शुद्ध व्यावसायिक न होकर सेवा, सुधार एवं मिशनरी भावना से ओत-प्रोत था। उसमें नवीन-पुरातन, राज भक्ति-देश भक्ति, मातृ-भाषा हिन्दी के साथ उर्दू-फारसी से लगाव और अंग्रेजी से प्रतिबद्धता और द्वन्द्व का विचित्र विरोधाभास झलकता है।

परिमाण या संख्या में ही नहीं, गुणवत्ता और श्रेष्ठ प्रतिमानों की दृष्टि से भी इस युग की पत्रकारिता गौरव की अधिकारिणी है। विवेच्य पत्र-पत्रिकाओं में युगीन राष्ट्रीय नव-चेतना और अन्तर्विरोध कभी खुलकर और कभी राजभक्ति की आड़ में छिपकर व्यक्त हुए हैं।

अधिकांश पत्र-पत्रिकाएं समाचारों से अधिक विचारों की वाहक थीं। उनके पुराने बासी समाचार पाठकों को आकर्षित और उत्तेजना नहीं दे पाते थे। अतः ये विचार-प्रधान पत्रिकाओं के रूप में पनपीं क्योकि नव-विचार ही पाठकों में आवेग और विद्रोह पैदा कर सकते थे।

हिन्दी साहित्य को व्यापक राष्ट्रीय-चेतना और जन-जीवन से जोड़ने का माध्यम पत्रकारिता हुई। इससे पूर्व दरबारी सामंती प्रवृत्ति के कारण साहित्य की धारा संकुचित दरबारी गौरवगान और चाटुकारिता तक सीमित थी। 'हिन्दी पत्रकारिता का भारतेन्दु युग उस दरबारी संस्कृति और रीतिकालीन साहित्य पर एक प्रश्नचिह्न था जो एक सीमा में बंधकर रुग्ण हो गया था'।[1]

इस काल में अधिकांश हिन्दी पत्र-पत्रिकाएं अल्पजीवी रहीं। पराधीन विषम परिवेश में भी इनका तीव्र उत्साह, समर्पित साधना और अदम्य जीवन-आंकाक्षा देखते ही बनती है, "पत्र साहित्य की परंपरा न होते हुए भी उसने थोड़े ही वर्षों में जो उन्नति की, उसका एकमात्र कारण लेखकों की धुन थी।—इंग्लैंड के विक्टोरियन गुग की आत्म-तुष्टि, उसकी समझौते की मनोवृत्ति, रूढ़िप्रियता, मानसिक गुलामी आदि बातों का भारतेन्दु युग में अभाव है। जनता में जागृति फैलाने का प्रधान साधन ये पत्र थे।"[2] अधिकतर प्रारंभिक पत्र-पत्रिकाएं दो भाषाओं उर्दू-हिन्दी में एक साथ निकली। जो

1. कृष्ण बिहारी मिश्र, हिन्दी पत्रकारिता, पृ० 114
2. 'भारतेन्दु युग', पृ० 28, 39

संपादक उर्दू संस्करण निकालता, वही हिन्दी में भी पत्र प्रकाशित करता। इस प्रकार उर्दू की लोकप्रियता और हिन्दी के जनसाधारण में प्रचलन और सहज स्नेह के कारण प्रारंभिक हिन्दी-उर्दू पत्रों का धार्मिक सांप्रदायिक विभाजन उग्र रूप नहीं धारण कर पाया था क्योंकि हिन्दी-उर्दू दोनों में से किसी एक भाषा की उपेक्षा करके वे जीवित नहीं रह सकती थीं।

अधिकतर पत्र-पत्रिकाएं मासिक, साप्ताहिक या पाक्षिक रूप में ही प्रकाशित हुईं। दैनिक पत्रों में केवल तीन पत्र 'समाचार-सुधावर्षण' (1854), 'हिंदुस्थान' (1885), 'भारतोदय' (1885) ही थे क्योंकि दैनिक पत्र निकालने में आर्थिक व्यवस्था, धन, तकनीकी विकास तथा जन-जागृति की आवश्यकता होती है। हिन्दी पत्रों में तो घाटा-ही-घाटा था। अतः दैनिक पत्रों को अधिक प्रोत्साहन नहीं मिल सका।

संपादकों में पारस्परिक सहयोग और सहृदयता की भावना मिलती है। यद्यपि तत्कालीन पत्रों में आपस में नोंक-झोंक चलती रहती थी पर उसमें भी हिन्दी-हिंदुस्तान के हित-चिंतन की भावना ही छिपी रहती थी।

बाह्य पर्यावलोकन अर्थात आकार, रूप-सज्जा, मुद्रण प्रस्तुति की दृष्टि से भारतेन्दुकालीन पत्र-पत्रिकाएं अत्यन्त साधारण स्तर की मानी जा सकती हैं किन्तु ये अपनी विस्फोटक संपादकीय सामग्री, वैचारिक वैभव, प्रगतिशील तेवर एवं कलात्मक सोद्देश्यता आदि गुणों के कारण उच्चस्तरीय हैं। इनकी संपादकीय सामग्री एवं समाचार शुद्ध भारतीय-संस्पर्श, बौद्धिक ताजगी, आधुनिक स्टाइल, निर्भीक स्पष्ट नीति आदि से युक्त थे जिन्होंने अपने युग के कठिनतम उद्देश्यों को परिपूर्ण करके जन-जागरण का बीड़ा उठाया था।

इन हिन्दी पत्र-पत्रिकाओं के संपादक ही इनके पीर-बावर्ची-भिश्ती और खर थे। इन संपादकों की ओजस्विनी लेखन शैली, विलक्षण विद्वता और वैचारिक तेवर से पत्रों का साहित्यिक रूप सौन्दर्य दमक उठा था।

जागरण युगीन पत्र-पत्रिकाओं का संपादकीय लेखन विचारोत्तेजक, सूचना गर्भित एवं बुद्धिसंगत होने के कारण पठनीय होता था। उनमें राजनयिक, मानवीय एवं सामाजिक व्यंग्य भरपूर है जो पाठकों की मूल समस्या को समझने की अन्तर्दृष्टि देते हैं। अतः ये पत्र-पत्रिकाएं अपनी प्रांजल सामग्री तथा आलोचनात्मक अग्रलेखों में सर्वग्राह्य शैली द्वारा तर्क की और रस की विचाराधारा प्रवाहित करने और ब्रिटिश उपनिवेशवाद का विरोध करने में अग्रणी थीं जिनका प्रभाव परवर्ती हिन्दी पत्रकारिता पर पड़ा था।

उस काल की पत्र-पत्रिकाओं की भाषा में निर्माणकाल की अव्यवस्था तथा व्याकरण सम्मत एकरूपता का अभाव मिलता है फिर भी वह जीवंत, सहज और आम बोलचाल की स्वाभाविक भाषा है जो पत्रकारिता के लिए आज भी उपयुक्त मानी जाती है।

उस युग में पत्रकारिता, साहित्य और राजनीति एक साथ कदम-से-कदम मिलाकर चली थी। जागरण युग के पत्र-संस्थान केवल समाचार-वितरण की एजेंसियां न होकर जनता की टूटी आस्था, आत्मविश्वास और मनोबल को जोड़ने के सेतु थे। विवेच्य-युग में आधुनिकता, राष्ट्रीयता और भारतीयता की वाहिका पत्रकारिता ही रही। उसमें हिन्दी और हिंदुस्तान के प्रति गहरी प्रतिबद्धता दृष्टिगोचर होती है।